चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र





ब्रह्मदत्त काशी का राजा था। और पाञ्चाल कोपिल्य नगर का राजा था। यह उत्तर पाञ्चाल देश की राजधानी थी। वह दुराचारी और विलासी हो गया था और शासन सम्बन्धी बातों में कुछ भी दिलचस्पी नहीं दिखाता था। कहा जाता है, यथा राजा तथा प्रजा। इसलिए मन्त्री भी राजा की तरह अन्याय करने लगे। प्रजा पर अधिक कर थोपे गये। दिन प्रति दिन राज्य में अराजकता बढ़ती गई।

प्रजा को चैन न थी। दिन में राजा के सिपाही तङ्ग करते और रात में चोर। इसलिए लोगों ने अपने घरों में ताले लगा दिये, दरवाजों के सामने काँटों की झाड़ियाँ रख दीं अपने पत्नी, बाल-बच्चों को लेकर, जङ्गल में जाकर, रहने लगे। वे दिन भर जङ्गल में रहते और आधी रात के करीब अपने घर जाते।

इसी समय बोधिसत्व, शहर के बाहर, एक पेड़ के आराध्य देवता के रूप में पैदा हुए। राजा प्रति वर्ष उसकी पूजा करवाता, उसके पास मेले लगवाता और बहुत-सा रुपया खर्च करता।

"यह राजा, जो मेरी इतनी भक्ति से पूजा कर रहा है, अविवेक के कारण अपने राज्य में अराजकता का कारण बना हुआ है। इसको सद्मार्ग पर सिवाय मेरे और कोई नहीं ला सकता।" देवता ने सोचा।

तुरन्त जहाँ राजा सो रहा था, वह वहाँ जाकर प्रत्यक्ष हुआ। एक देदीप्यमान प्रकाश को साक्षात् अपने सामने देख राजा ने पूछा- "देव! आप कौन हैं?"

"राजा! में देवता हूँ। मैं तुझे उपदेश देने आया हूँ।" देवता ने कहा।

"क्या है वह उपदेश?" राजा ने पूछा।

"राजा! तुम बिना सावधानी व ध्यान के राज्य पालन कर रहे हो। इसलिए तुम्हारे राज्य का विनाश हो रहा है। जो राजा बिना न्याय के शासन करता है वह मरने के बाद नरक जाता है। राजा को बिगड़ा देखकर और भी बिगड़ जाते हैं। इसलिए राजा को हमेशा सन्मार्ग पर ही चलना चाहिए।" देवता ने कहा।

"देव! अब मुझे क्या करना चाहिये?" राजा ने पूछा।

"राज्य का काम कम से कम अब तुम अपने आप देखो। अराजकता हटाओ और राज्य की रक्षा करो।" देवता यह कहकर अदृश्य हो गया।

राजा को अक्ल आ गई। उसने यह जानने का निश्चय किया कि उसके राज्य की क्या हालत थी। अगले दिन उसने अपने मन्त्रियों को बुलाया, उनको राज्य कार्य सौंप कर पुरोहित को साथ लेकर, वे निरीक्षण के लिए निकल पड़े।

नगर के बाहर उन्हें एक बूढ़ा दिखाई दिया। वह घर में ताला लगाकर, घर के चारों ओर काँटों की झाड़ियों डालकर, जङ्गल में बाल-बच्चों को लेकर भाग गया था। शाम

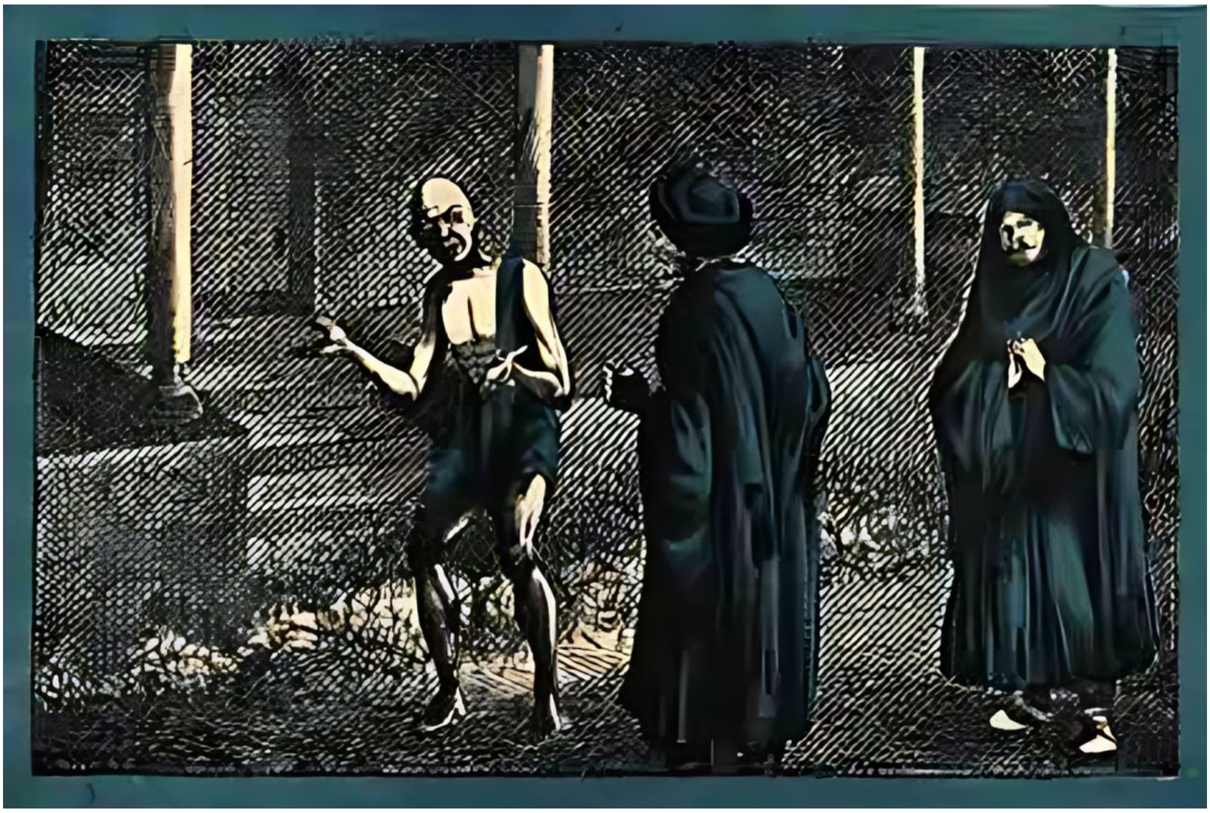


को, जब घर वापस आकर, वह अपने घर का दरवाज़ा खोल रहा था तो उसके पाँव में काँटा चुभ गया। तुरन्त वह पाँव पकड़कर, कराहता कराहता बैठ गया। काँटा निकालते हुए उसने कहा-"जैसे मेरे पाँव में काँटा चुभा है, वैसे ही युद्ध में, पाञ्चाल राजा को बाण लगे!" वह यों राजा को कोस रहा था।

यह राज पुरोहित ने सुन लिया। उसने बूढ़े के पास जाकर कहा-"आप बूढ़े हैं। आपकी आँखें कमज़ोर हैं, ठीक दिखा नहीं होगा, इसलिए काँटा चुभ गया। इसमें राजा का क्या कसूर है?"

"राजा क्योंकि अन्यायी है, इसीलिए राज कर्मचारी दुष्ट हो गये हैं। दिन में सिपाही तङ्ग करते हैं और रात में चोर। इसलिए लोग घरों में ताले लगाकर, घर के चारों ओर काँटे डालकर, बाल-बच्चों को लेकर, जङ्गल में भाग रहे हैं। नहीं तो भला मेरे पाँव में यह काँटा क्यों चुभता?" बूढ़े ने कहा।

राजा ने अपने पुरोहित के कान में कहा-"इस बूढ़े की बात सच है। आओ, हम नगर वापिस चलें और राज्य का परिपालन ठीक तरह करें।"



"प्रभू! आप जल्दी न कीजिये।" यह कहकर पुरोहित, राजा को एक और ग्राम में ले गया। वहाँ उनको एक स्त्री दिखाई दी। उसकी दो लड़कियाँ थीं, जो सयानी हो चुकी थीं, पर कवाँरी ही थीं, वह उन्हें जङ्गल में ले नहीं जा सकती थी। उसने उनको घर में ही रखा और स्वयं उनके लिए लकड़ी, पत्ते और चीजें लाकर देती। वह पत्तों के लिए एक पेड़ पर चढ़ी और नीचे गिर गई। वह राजा को दुत्कार रही थी- "इस राजा के जीते जी लड़कियों की शादियाँ भी नहीं होंगी....!"

यह सुन, पुरोहित ने उसके पास जाकर पूछा-"अरे, पगली! क्या राजा का यही काम है कि सब कवाँरी लड़कियों के लिए वर ढूँढता फिरे?"

"अराजकता बढ़ गई है। दिन में सिपाहियों का डर है, रात में चोरों का। लड़कियों को वर कैसे मिल सकते हैं?" उस स्त्री ने कहा।

राजा और पुरोहित वहाँ से आगे गये। उन्हें एक खेत में, एक किसान हल जोतता हुआ दिखाई दिया। वह हल जोत रहा था कि एक बैल, हल



के डण्डे से टकरा कर नीचे गिर गया। "इस पाञ्चाल राजा के हृदय में भाला क्यों नहीं फँस जाता और वह क्यों नहीं इस प्रकार गिर जाता? हम लोगों की मुसीबतें टलेंगी!"

पुरोहित ने किसान से पूछा-"तुम्हारी बेपरवाही के कारण बैल गिर गया। इसमें राजा का क्या दोष है?"

"राजा का दोष नहीं है तो और किसका है? अगर शासक दुष्ट हो तो गरीब कैसे जियेंगे? दिन में सिपाहियों का डर, रात में चोरों का। घरवाली जो खाना बनाकर लाई थी दुष्टों ने उसे खा लिया। में यह सोच रहा था कि वह फिर कब खाना लायेगी कि इतने में बैल को नोट लगी और वह नीचे गिर गया।" किसान ने कहा।

उस दिन वे दोनों एक ग्राम में रहे। अगले दिन सवेरे उनको एक ग्वाला दिखाई दिया। वह दूध दुह रहा था कि गौ ने लात मारी। ग्वाले को चोट लगी। उसने कहा-"अगर इस पाञ्चाल राजा को भी युद्ध में तलवार की चोट लगे तो अच्छा हो!"



"अगर तेरी गौ लात मारे तो वह भी राजा का कसूर है?" पुरोहित ने पूछा।

"क्यों नहीं? अगर कर्मचारी दुराचारी हो तो दुर्बल कैसे जियेंगे? जो गौवें दूध देती थीं, वे पकड़ ले गये और जिन गौवों को कभी न दुहा गया हो उनको दुहा गया तो वे लात नहीं मारेंगी तो क्या करेंगी?" ग्वाले ने कहा।

वहाँ से पुरोहित और राजा राजधानी की ओर चले। रास्ते में उन्हें एक दृश्य दिखाई दिया। कीचड़ में जिन्दे मेंढ़कों को कुरेद कुरेद कर कौवे खा रहे थे । एक मेंढक ने गुस्से में कहा-"ये कौवे जैसे हमें खा रहे हैं, वैसे शत्रु, पाञ्चाल देश के राजा को और उसकी सन्तान को नोच नोच कर खाये!"

"अरे मेण्ढक! खानेवाले कौवे को तो कुछ कह न सके, विचारे राजा को ही शाप देने लगे?" पुरोहित ने कहा।

"राजा को सन्तुष्ट करने के लिए पुरोहित इसी तरह पूछता है। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं। क्योंकि देश में, कौओं को खाने की कमी है, इसीलिए तो वे जिन्दे मेण्ढकों को खा रहे हैं। इस तरह के देश का राजा मर जाये तो क्या अच्छा हो।" मेण्ढक ने कहा।

यह सुन राजा ने सोचा कि अब मुझे मेण्ढक भी शाप दे रहे हैं। अब कोई फायदा नहीं। राजधानी जाकर हमें यह अराजकता खतम ही करनी होगी।

उसने राज्य शासन में दिलचस्पी दिखाई। गलतियाँ ठीक कीं और इस तरह शासन किया कि लोग शान्ति और सुखपूर्वक रहने लगे।





[११]

[पिङ्गल ने माँ से जान लिया कि उसके भाइयों ने उसको कैसे सताया था। परन्तु जब भाई रोने का ढोङ्ग करके आये तो उसमें सहज भ्रातृप्रेम उमड़ आया उसने उनको अपने घर में निमन्त्रित किया। वे पिङ्गल के लाये हुए धन को हड़पने के लिए पिङ्गल को एक जहाज के कप्तान को बेचने की साजिश करने लगे। उसके बाद....]

कप्तान ने जो कुछ जीवदत्त को कहना था, वह सब सुना। फिर वह हाथ फैला कर जोर से हँसा। जीवदत्त व लक्षदत्त उस अट्टहास का अर्थ न समझ सके। वे एक दूसरे का मुँह ताकने लगे।

कप्तान थोड़ी देर तक कुछ सोचता रहा। उसने फिर जीवदत्त की आखों से आखें मिलाते हुए पूछा-"'जो तुम कह रहे हो क्या वह सब सच है? क्या सचमुच तुम्हारा भाई पिङ्गल तुम्हें और तुम्हारी माँ को सता रहा है? मेरे सामने झूठी बातें नहीं चलती, समझे?"

"हाँ, सच है, कप्तान साहब, बिल्कुल सच। मेरे भाई ने तिल भर भी झूठ नहीं कहा है। हम इतने दिनों से अपने भाई के कारण जो कष्ट झेल रहे हैं वे भगवान ही जानते हैं।" लक्षदत्त ने जोर देकर कहा।



कप्तान ने दोनों भाइयों को गौर से देखा। सिर हिलाते हुए उसने कहा- "अगर यह बात है तो मुझे तुम्हारे भाई को खरीदने में कोई एतराज नही है। मैं उसे दो-तीन साल जहाज पर काम दूँगा। तब उसकी अक्ल दुरुस्त हो जायेगी। उसके बाद मैं उसको फिर घर वापिस भेज दूँगा। क्यों, ठीक है न? तुम्हारा भी इसी में फायदा है।"

"कप्तान साहब! आपका भला हो। वह काम आप न कीजिये।" जीवदत्त गिड़गिड़ाया-"यूँ ही वह बड़ा दुष्ट है। अगर आपने दो तीन साल जहाज पर रख कर घर भेजा तो जरूर वह हमारी, और हमारी माँ की जान निकाल कर रहेगा। वह बदला लेता है तो साँप की तरह लेता है। हम उसे अच्छी तरह जानते हैं।" उसने कहा।

"अगर यह बात है तो क्या उसे मुझे गुलाम के रूप में बेचने के लिए तुम्हारी माँ भी मानती है? बाद में जाकर राजा से शिकायत करने से फायदा नहीं। सोच समझकर बताओ।" कप्तान ने ऊँची आवाज में कहा।

जीवदत्त और लक्षदत्त ने कानों मे कुछ बातचीत की। फिर अति विनय से जीवदत्त ने इस प्रकार कहा :-

"हुजूर, कप्तान साहब हम सब बातें माँ से करके ही आये हैं। वे भी चाहती हैं कि जैसे तैसे उसको घर से बाहर भेज दिया जाय। भले ही लड़का हो पर वह उसका सताना नहीं सह सकती है। परन्तु इतना सब होते हुए भी वह अपने आप आपको अपना लड़का न बेच सकी। इसीलिए हम दोनों आये हैं।"

"अगर यह बात है तो आप शाम को, सूर्यास्त के समय, किसी न किसी बहाने उसको समुद्र के किनारे ले आना। बाद में जो कुछ करना होगा में कर दूँगा। यह लो दाम, जो इसके लिए मैंने देने का इरादा किया है।" कप्तान ने सौ मुहरें जीवदत्त को देनी चाहीं।

जीवदत्त ने, बिना मुहरें लिए कहा- "हुजूर, उसको समुद्र के किनारे तक लाना हमारे बस की बात नही है। उसमें सौ लोमड़ियों की चालाकी है और अस्सी हाथियों की ताकत है। इसलिए आप आज रात को हमारे घर आइये और उसको पकड़कर ले जाइये।"

जीवदत्त का भय देखकर कप्तान जोर से हँसा। "उसकी चालबाजी मेरे सामने नहीं चल सकती। अगर राक्षस भी हाथ में आया तो उसके हाथ पैर जञ्जीरों से बाँधकर, मैं उससे जहाज में काम करवाऊँगा। अच्छा, में दो आदमियों को साथ लेकर ठीक समय पर तुम्हारे घर आऊँगा। तुम दोनों तैयार रहना।"

"हम आपकी सहायता के लिए बड़े आभारी हैं।" जीवदत्त ने और



लक्षदत्त ने कहा। उन्होंने कप्तान की दी हुयी मुहरें ले लीं। उसे घर का पता बता दिया। और वे खुशी में सुध बुध भूलकर घर की ओर चले।

"अब हमें कुछ ऐसा काम करना चाहिये ताकि पिङ्गल को सन्देह न हो। कप्तान अगर दो आदमियों को साथ लेकर आया तो उसे जरूर सन्देह हो सकता है।" लक्षदत्त ने कहा।

"आह.... इसका कोई डर नहीं है। इसके लिए मैने पहले ही एक चाल सोच ली है।" कहते हुए जीवदत्त ने चारों

ओर सिर घुमाकर देखा। उसने लक्षदत्त के कान में कुछ कहा।

लक्षदत्त ने जोर से हँसते हुए, ताली पीटते हुए, कूदते फाँदते हुए कहा-"भैय्या, मैं जानता हूँ, तुम बृहस्पति से भी अधिक अक्लमन्द हो। जब पिङ्गल का लाया हुआ धन हमारा हो जाएगा तो बँटवारे में तो कोई अन्याय नहीं करोगे?"

"अन्याय! देखते देखते भला भाई को कैसे धोखा दूँगा? ऐसी बात तो कभी हमारे वंश में ही नहीं हुयी।" जीवदत्त ने कहा।

दोनों भाई हँसते हँसाते, सीटी बजाते चले। जब घर के पास आये तो उन्हें पिङ्गल बाहर बैठा दिखाई दिया। उन्होने झट रोनी-सी शक्ल बनाली उसके पास गये। पिङ्गल ने उनकी शक्ल देख कर कहा-"भाइयो, क्यों आप इतने दुखी हैं? क्या हो गया? क्या मैं आपकी मदद कर सकता हूँ?"

जीवदत्त ने रुँधी हुयी आवाज में कहा-"और कुछ नहीं भाई। आज हम आ रहे थे कि रास्ते में हमें हमारा एक पुराना दोस्त जहाज का कप्तान मिला। वह इस



शहर में किसी व्यापार पर आया हुआ है। उसने कभी हमारी बड़ी आवभगत की थी, आतिथ्य किया था। परन्तु आजतक हमने उसको अपने घर दावत न दी, हम गरीब जो हैं। इसका हमें बड़ा अफसोस हो रहा है।"

"भैय्या, क्या आपका दोस्त मेरा दोस्त नहीं है? अब तो हम कोई गरीब नहीं हैं। अगर हम चाहें तो अवन्तीपुर के हर आदमी को रोज दाबत दे सकते हैं। आप अपने दोस्त, जहाज के कप्तान को अपने नौकर-चाकर, मित्रों के साथ भोजन के लिए बुलाइये।" पिङ्गल ने उत्साह साथ कहा।

"क्यों, सच है भैय्या?" जीवदत्त और लक्षदत्त ने इस खुशी से पूछा जैसे दुनियाँ में उनसे अधिक कोई खुश ही न हो।

"हाँ, सच है। आप अपने दोस्त को बुलाइये। अच्छी दावत देंगे।" पिङ्गल ने कहा।

"अच्छा, तो यह बात हम अपने दोस्त से कह आते हैं।" यह कहकर, जीवदत्त, और लक्षदत्त फिर जल्दी जल्दी भागते भागते शहर वापस गये।





वे दोनों सूर्यास्त तक, इधर उधर जुआ खेलते रहे, शराब पीते रहे। अन्धेरा होते ही वे जहाज के कप्तान की ठहरने की जगह गये। उसने साथ आने के लिए कहा। जहाज का कप्तान बड़ा खुश हुआ। दो हट्टे कट्टे नाविकों को साथ लेकर निकला।

पिङ्गल ने जहाज के कप्तान और उसके अनुचरों का हार्दिक स्वागत किया। जब वे एक कमरे में आराम से बैठ गये तो एक बड़े थैले में से तरह तरह के पकवान निकाल कर, पिंगल और उसकी माँ ने उनको परोसा। जहाज के कसान को थैले का रहस्य न मालूम था। उसने सोचा कि जीवदत्त और लक्षदत्त ही उसका यों आतिथ्य कर रहे थे।

रात में बहुत देर तक सब गप्पें लगाते रहें। पिङ्गल जब ऊँघ रहा हो तो अचानक उसको बाँधकर ले जाने की कप्तान ने सोची। परन्तु वह ऊँघता नजर न आया, वह जोश से कहानी सुना रहा था। इधर उधर की खबरें बता रहा था।

यह सोचकर कि अधिक समय व्यर्थ करना अच्छा न था; कप्तान ने जीवदत्त और लक्षदत्त को इशारा किया। वे सब फौरन पिङ्गल पर कूदे। उसके हाथ पैर पकड़ लिए। जीवदत्त ने उसके मुख में कपड़े ठूँस दिये ताकि वह चीखे चिल्लाये न।

पिङ्गल, पहले पहल तो कुछ चौंका। फिर उसने उनकी पकड़ से अपने को छुड़ाने का पूरा प्रयत्न किया। पर वह अकेला था, और उसको बाँधने वाले पाँच। तुरन्त उसको, उसका सेवक भल्लूक केतु याद आया। चाहे कैसा भी कष्ट हो, एक मन्त्र के उच्चारण करने पर उसने तुरन्त आने की प्रतिज्ञा की थी। उसने पिङ्गल को वह मन्त्र बता ही

रखा था। परन्तु उस समय बहुत कोशिश करने पर भी पिङ्गल को वह मन्त्र याद न आया। वह विचारा अपने भाइयों की साजिश का शिकार हुआ। उसे कप्तान का गुलाम होना पड़ा।

बगल के कमरे में उसकी माँ सो रही थी। पर उसे कुछ न मालूम था। पिङ्गल के हाथ पैर बाँधकर उसको बेहँगी की तरह कन्धों पर लटका कर कप्तान के पीछे उसके दोनों नौकर चले। जीवदत्त और लक्षदत्त भी उसके साथ समुद्र के किनारे तक गये। वहाँ उन्होने जहाज के कप्तान से कहा-"आप किसी भी हालत में हमारे भाई को न छोडिये। वह नाग साँप है। यह हम आपको पहले ही बता चुके हैं।"

"साँप का मुख बन्द कर दिया है। मैं यह भी जानता हूँ कि उसके दान्त कैसे निकाले जा सकते हैं। अगर मैने उसको जहाज के लोहे के मस्तूल से बाँध दिया तो भगवान भी उसे न छुड़ा सकेंगे।"

जीवदत्त और लक्षदत्त बार बार कप्तान को धन्यवाद देकर घर आये। क्यों कि तब तक सवेरा न



हुआ था; इसलिए उन दोनों ने थोड़ी देर सोने का अभिनय किया। सवेरा होते ही, जल्दी जल्दी माँ के पास गये और उसे उठाया-"माँ पिङ्गल कहाँ है?" उन्होने घबराते हुए पूछा।

माँ ने उनकी ओर निहारा। "क्यों इस तरह घबरा रहे हो? वह कमरे में सो रहा होगा। देखो।" उसने कहा।

"वह कमरे में नहीं है। घर में और कहीं भी वह नहीं दिखाई देता। " जीवदत्त ने कहा।

यह सुन, माँ को बहुत डर लगा। वह तुरन्त खाट से उतरी। उसने सारा घर खोजा। उसको घबराता देख जीवदत्त ने झट कहा-

"माँ! मुझे एक सन्देह हो रहा है। भाई कहीं कप्तान के साथ, जो रात हमारे यहाँ भोजन पर आये थे, समुद्र यात्रा पर तो नहीं चला गया है? यह हो सकता है।"

"शायद यही हुआ होगा। कप्तान भाई से कह रहा था कि किसी द्वीप में किलों के खण्डहर हैं और उनके तहखाने में खजाने हैं। और, पिङ्गल कह रहा था कि उन खजानों के ढूँढ निकालने में वह बहुत चतुर था।" लक्षदत्त ने बताया।

बिचारी माँ को इस बात में कुछ सचाई दिखाई दी। उसने हाथ जोड़कर कहा-"बेटा! पिङ्गल किस्मतवाला है। उसकी सद्बुद्धि और सद्व्यवहार उसको हर विपति से बचायेंगे। मेरा बेटा जरूर जल्दी वापिस आयेगा।" उसने परमात्मा की प्रार्थना की। माँ को यह करता देख दोनों दुष्ट लड़कों को बड़ा गुस्सा आया। उन्होंने माँ की ओर देखकर जोर से हँसते हुए कहा-"यानि, तुम्हारा कहने का मतलब यह कि वह अच्छा है और हम खराब हैं। हम जानते हैं, तुम शुरु से ही उसका पक्षपात करती आई हो। अब इस घर में एक क्षण नहीं रहेंगे। पिता, जो सम्पति छोड़ गये हैं, उसे खोजकर हम ले जाएँगे।" कहते हुए वे निकल पड़े।

माँ ने उनको रोकते हुए कहा-"जो कुछ तुम्हारे पिता ने कमाया था, वह तुम कभी का फेंक चुके हो। इस घर में जो कुछ है, वह सब पिङ्गल का अपना कमाया हुआ है।"

यह सुन दोनों भाई खौल उठे। उन्होंने माँ को बुरा भला कहा पिङ्गल को जो धन, जादूवाली थैली, अस्त्र-वस्त्र, वगैरह पद्मपाद ने दिये थे, उन्होंने ढूँढ निकाले।

(अभी और है)





[गताङ्क से आगे]

कई दिन व्यापारियों ने काफिले की इन्तजार की, फिर वे अपने पैसे के बारे में चिन्तित होने लगे। उन्होंने अलि के सामने अपनी चिन्ता व्यक्त भी की क्योंकि उसकी बात का यकीन करके ही उन्होंने मारूफ को कर्ज दिया था।

अलि ने मारूफ को अलग ले जाकर कहा-" तुम कतई पागल हो गये हो, व्यापारी पैसे के लिए तकाजा कर रहे हैं। सुना है, तुमने साठ हजार मुहरें ली हैं। इस धन से तो बहुत कुछ व्यापार किया जा सकता था। तुमने निरे आलसी की तरह उस घन को, भिखारियों को दे दिया। इस कर्ज को कैसे चुकाने की सोच रहे हो?" मारूफ को अलि ने डाँटा फटकारा।

"कोई डर नहीं है। इन साठ हजारों की भी क्या बात है? मेरा काफिला आने दो। व्यापारी चाहेंगे तो सोना दूँगा, नहीं तो माल दूँगा। जो कुछ भी चाहें मेरे पास ढेर के ढेर हैं।" मारूफ ने कहा।

"अरे पागल! यह कहानी मुझे ही सुना रहे हो। मैं तुम्हारी पोल खोल सकता हूँ। क्या समझ रखा है?" अलि ने कहा।

"बस करो। क्या तुमने मुझे गरीब समझ रखा है? रास्ते में बेशुमार दौलत है। मेरा काफिला आने दो। इन व्यापारियों का धन उन्हें तुरन्त दे दूँगा।" मारूफ ने कहा।

"अरे दुष्ट! मुझसे ही क्या झूठ बोलेगे? देख, क्या करता हूँ।" अलि ने डराया।

"चाहो तुम कुछ भी कहो उनको मेरे काफिले के आने तक इन्तजार करनी ही

श्री एम. के. मेघाणी



होगी। उसके बाद उनका पैसा उनको दे ही दूँगा।" मारूफ ने कहा।

इससे अलि का मुख बन्द हो गया। जिसका, कभी यह कहकर परिचय दिया था कि वह करोड़पति था, अब वह कैसे कहे कि वह कङ्गाल था?

बाकी व्यापारियों ने अलि के पास जाकर पूछा-"हमारे कर्ज के बारे में क्या कहते हो? क्या कुछ तय हो सकेगा कि नहीं?

अलि ने कहा-"कर्ज के बारे में उससे कहने के लिए मैं भी थोड़ा हिचकिचाया क्योंकि मैंने ही उसको एक हजार दीनारें उधार दे रखी हैं। यूँ तो, उसको उधार देने से पहले आपको मुझसे कहना चाहिये था। मैं आपके कर्ज का जिम्मेवार नहीं हूँ। उसे आप ही वसूल कर लीजिये। अगर आप नहीं कर पाते हैं तो सुल्तान से शिकायत कीजिये कि उसने आपको दगा दिया है।"

व्यापारियों ने जाकर सुल्तान से मारूफ और उनमें, जो लेना देना हुआ था, उसके बारे में कहा। "हुजूर! हम इसे ग़रीब भी कैसे समझें, जब कि इसने हमारे सामने ही भिखारियों को मुट्ठी भर भरके सोने की मुहरें दी हैं। ग़रीब कभी यह न करेगा। दान दक्षिणा के लिये ही उसने हमसे साठ हजार मुहरें उधार में ली थीं। और अगर यह सोचें कि वह रईस है तो बहुत दिन इन्ताजार की पर उसका काफिला आता नजर नहीं आता।"

उनकी बातें सुनकर सुल्तान को भी विश्वास हो गया कि मारून बहुत बड़ा रईस था।

सुल्तान बड़ा लालची था। और जब उसको मालूम हुआ कि मारूफ ने मुठ्ठी भर भर के सोना लुटाया था तो उसने भी

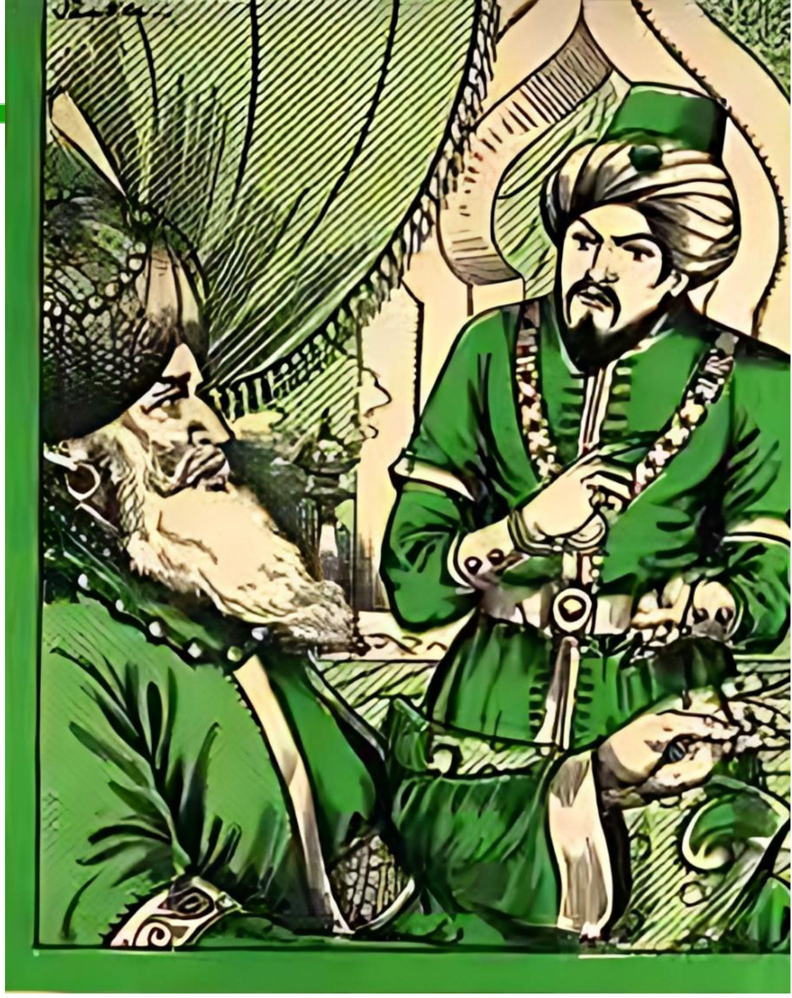
उससे फायदा उठाना चाहा। उसने व्यापारियों को भेज दिया। अपने वज़ीर को बुलाकर कहा-"हमें इस मारूफ से दोस्ती करनी चाहिये। उसका काफिला आज नहीं तो कल आयेगा ही। ये व्यापारी उसकी राह देख रहे हैं। इससे पहले कि वे कुछ हड़पें हमें चौकन्ना रहना होगा। जरूरत पड़ी तो मैं अपनी लड़की की शादी भी उससे कर दूँगा। और उसकी सम्पति इस तरह अपनी सम्पत्ति से मिला लूँगा।"

"हुजूर, आप लालच के फेर में धोखा न खायें। यह आदमी बड़ा धोखेबाज है।" वज़ीर ने कहा।

"मैं पहले उसको परख कर देखूँगा। उसके लिये भी मैंने तरीका सोच रखा है। अगर यह साबित हुआ कि वह धोखेबाज है तो उसका सिर कटवा दूँगा।" सुल्तान ने कहा।

तुरन्त वजीर ने मारूफ को बुलवाया। वह सुल्तान को सलाम करके बैठ गया।

"क्या यह सच है कि तुमने शहर के व्यापारियों से साठ हजार दीनारें कर्ज में ली हैं?" सुल्तान ने पूछा।



मारूफ ने कहा कि सच है। "तो उनका कर्ज क्यों नहीं चुकाते?" सुल्तान ने उससे फिर पूछा।

"ज्यों ही मेरा काफिला आयेगा त्यो ही उनका कर्ज में चुका दूँगा। सोना चाहेंगे तो सोना दूँगा, माल चाहेंगे तो माल दूँगा। चाहे जो चाहें मेरे पास ढेर के देर हैं।" मारूफ ने कहा।

उसको परखने के लिये सुल्तान ने हजार दीनारों की कीमत वाली मोती उसको देते हुए पूछा-"क्या इस प्रकार के मोती आपके काफिले में आ रहे हैं?"

मारूफ ने उसे इधर उधर फेर कर देखा। आखिर उसने उसे पैर के नीचे रखकर कुचल दिया।

सुल्तान को गुस्सा आगया। "क्यों? तुम्हारा क्या इरादा है?" उसने पूछा।

"कुछ भी कीमत हो। यह मोती हजार दीनारों की नहीं है। मेरे पास इससे भी बड़ी बड़ी मोतियाँ हैं।" मारूफ ने कहा।

सुल्तान का लालच और भी बढ़ गया। उसने शहर के व्यापारियों को बुलाकर कहा-"आपको अपने कर्ज के बारे में बिल्कुल फिक्र नहीं करनी चाहिये। काफ़िला जरूर आयेगा। तब आप अपना कर्ज ले सकते हैं।"

उसने फिर बजीर को बुलाकर कहा। "मारूफ को राजमहल में मेहमान बनाओ। यह भी मालूम करो कि वह कब मेरी लड़की से शादी कर सकेगा। हम उसकी सारी धन-दौलत अपने धन-दौलत में मिला सकेंगे।"

"हुजूर, इस परदेशी को देखकर मुझे बड़ा सन्देह हो रहा है। उसको राजमहल में बुलाकर रखना अच्छा नहीं है। अभी जल्दी ही क्या है। काफिला तो आने दीजिये।" बजीर ने सलाह दी।



यह सलाह सुनकर सुल्तान आग बबूला हो गया। "विश्वासघाती कहीं का! तुम पहले मेरी लड़की से शादी करना चाहते थे। मैं न माना। और अब उसकी अच्छी जगह शादी होने जा रही है तो तुम उसे बिगाड़ना चाहते हो और खुद उससे शादी करना चाहते हो। अगर इसकी हमारी लड़की से शादी होगई तो हम सब मालामाल हो जायेंगे। क्या तुम यह जानते हो?" सुल्तान ने कहा। वज़ीर ने सोचा कि अगर उसने और विरोध किया तो सुल्तान को और भी गुस्सा आयेगा। वह सीधे मारूफ के पास गया। "सुल्तान अपनी लड़की की शादी आपसे करना चाहते हैं। आपकी इस बारे में क्या राय है, उनको बतानी होगी।" बज़ीर ने पूछा।

"मैं सुल्तान का बड़ा अभारी हूँ । पर अच्छा होगा न यदि वे काफिले के जाने तक इन्तजार करें। राजकुमारी से शादी करने के लिये तो बहुत कुछ करना होता है। दुल्हन को कम से कम पाँच हजार सोने की थैलियाँ देनी होगी। शादी के दिन गरीबों को हजार सोने की थैलियाँ





बाँटनी होगी। सैनिकों के विनोद के लिये एक हजार थैलियाँ और देनी होंगी। दुल्हन को मुझे सौ जवाहरात देने होंगे, दास दासियों को भी सौ गहने देने होंगे। जब तक मेरा काफिला नहीं आता, मैं यह सब कैसे कर सकूँगा?" मारूफ ने सगर्व कहा। वजीर ने जाकर ये बातें सुल्तान से कही। सुल्तान का सिर चकरा गया। उसने तुरन्त मारूफ को बुलाकर कहा-"व्यापारियों के शिरोमणि, इस शादी को तुरन्त करवाना होगा। जो कुछ शादी में खर्च होगा, यह सब मैं दूँगा। मेरा खजाना रुपये पैसों से भरा पड़ा है। जितने रुपये की तुम्हें जरूरत हो उतना बिना किसी सङ्कोच के ले लो। जो तुम दुल्हन को देना चाहते हो वह काफिले के आने के बाद दे देना। परन्तु मुहूर्त को स्थगित करना मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है।"

मारूफ इसके लिए मान गया। उसकी और सुल्तान की लड़की की शादी के लिए सब तैयारियाँ होनी शुरु हो गई।

मारूफ को दुल्हा बनाकर एक घर में सिंहासन पर बिठाया गया। उसके सामने गवय्यों ने गाया, नर्तकियों ने नाचा, विदूषकों ने हास्य किया। बड़े बड़े पहलवानों ने मल्लयुद्ध किया।

उस दिन, वह खजाने से थैलों में सोना मँगाता ही रहा। खजाने से सोना लाते लाते वज़ीर के हाथ दुखने लगे। उसने मारूफ के पास आकर उसके कान में कहा-"अल्लाह तुम्हें माफ नहीं करेंगे। नगर के व्यापारियों के सोने को तो इधर उधर फेंका ही। अब सुल्तान के खजाने का धन भी बरबाद कर रहे हो।"

"इसमें तुम्हारा क्या जाता है? मेरा काफिला आने दो, में सुल्तान को उनके दिये हुआ का दुगना तिगुना दूँगा।" मारूफ ने कहा।

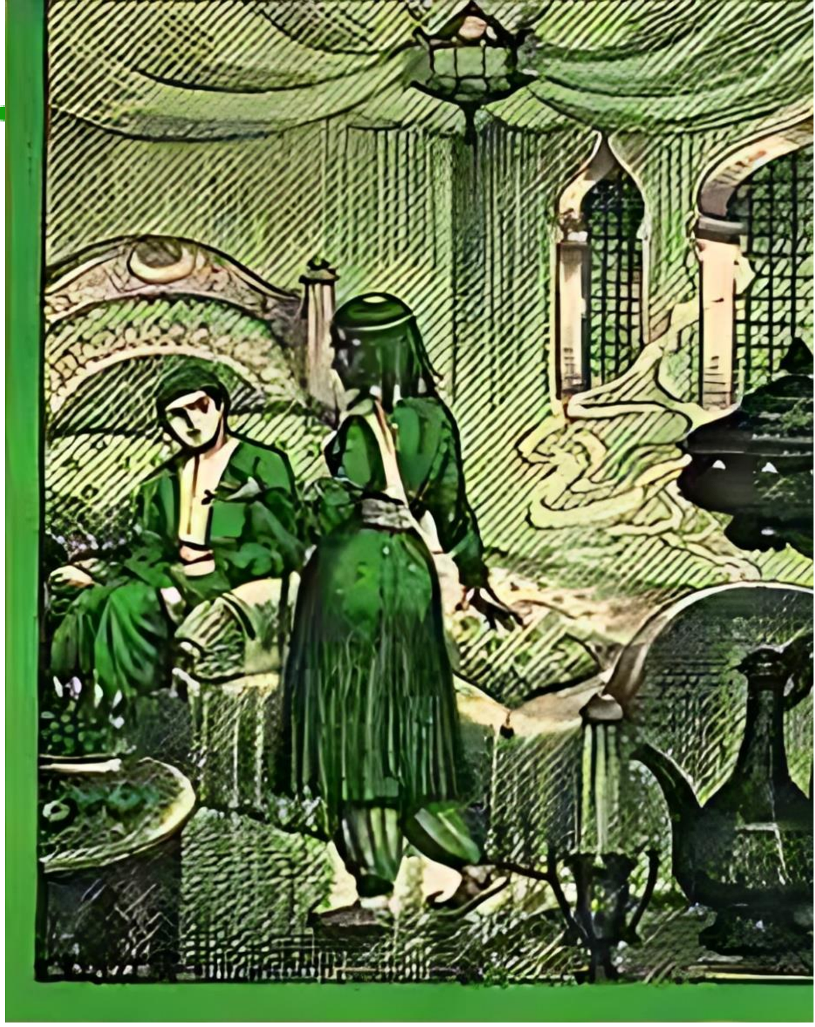
चालीस दिन के जलसों के बाद शादी का दिन आया। जब शादी का जलूस निकला तो मारूफ ने दोनों हाथों से गली में सोना बिखेरा।

आखिर दुल्हे और दुल्हन को शयन कक्ष में भेजा गया। मारूफ फर्श पर गिर गया। उसके आँखों में आँसू आ गये। सुल्तान की लड़की ने उसके पास आकर पूछा-"क्यों यों शोक कर रहे हो? तुम पर कोई आफत आ गई है?"

"यह सब खुदा जानता है। और इस प्रकार सब कुछ हो जाने का कारण तुम्हारा पिता ही है।" मारूफ ने कहा।

"अब क्या गल्ती हुयी है?" सुल्तान की लड़की ने पूछा।

"हुई क्यों नहीं है? सब मुझे देखकर बुरा भला कह रहे हैं। अगर मेरे काफिले के आने तक यह शादी रोक दी गई होती तो मैं तुम्हें कैसे कैसे कपड़े देता, कैसे कैसे गहने देता! शादी तो बड़े जोर शोर से हुई।



किन्तु क्यों कि मैंने तुम्हें कुछ नहीं दिया है इसलिये सब मुझे नीची नजर से देख रहे हैं।" मारूफ ने कहा।

"क्या इसी के लिए इतना दुख करने की जरूरत है?" सुल्तान की लड़की ने पूछा।

शादी के एक दिन बाद मारूफ ने नौकरों को, रसोई से लेकर बज़ीर तक, सबको, कपड़े और सोना दिया। ये दान वगैरह बीस दिन तक चलते रहे। सुल्तान का खजाना खाली हो गया। पर तब भी मारूफ के काफिले का कहीं पता न था।

बज़ीर ने सुल्तान से कहा-"महाप्रभु। खजाना खाली होगया है। दामाद साहब का काफिला कहीं आता नजर नहीं आता। क्या किया जाये?"

सुल्तान यह सुनते ही घबरा गया। "हाँ, हाँ, अब क्या किया जाये?" उसने पूछा।

"मैंने पहले ही कहा था कि इस ढोङ्गी का विश्वास न कीजिए। मुझ से पूछा जाये तो मैं कहूँगा कि इसका कोई काफिला ही नहीं है। आपको धोखा देकर बिना कानी कौड़ी दिये, उसने आपकी लड़की से शादी कर ली है। और तो और आपका खजाना भी खाली कर दिया है। इस निकम्मे को और कब तक यहाँ रखेंगे? तुरन्त इससे प्रायश्चित करवाइये।" वजीर ने कहा।

"अगर उसके बारे में सच मालूम हो तो कितना अच्छा हो।" सुल्तान ने लम्बी साँस छोड़ते हुये कहा।

"हुजूर! पति अपना रहस्य पत्नी के सामने नहीं छुपा सकता। उसके बारे में सच जानने के लिए क्या आप मुझे अपनी लड़की से एक बार बात करने देंगे?" बज़ीर ने पूछा।



सुल्तान मान गया। एक परदा लटकाया गया। सुल्तान की लड़की परदे के पीछे आकर खड़ी हो गई। वजीर ने परदे के इस तरफ खड़े होकर कहा-"खजाना खाली हो गया है। और खाली करने वाले आपके पति ही हैं। रात दिन सुन तो रहे हैं कि उनका एक काफिला है। पर उसे देखा किसीने नहीं है। इस मारूफ नाम के आदमी के बारे में क्या आप कुछ जानती हैं? क्या उनका विश्वास किया जा सकता है? ये बातें मेहरबानी करके आपको बतानी होंगी। सुल्तान साहब की इजाजत पर ही में आपसे ये बातें पूछ रहा हूँ।"

"वे रोज मुझ से कह रहे हैं कि मुझे अनगिनित मोतियाँ, हीरे, गहने आदि देंगे। मैंने भी उन्हें अभी तक आखों देखा नहीं है।" सुल्तान की लड़की ने कहा।

"महारानी! यह बात क्या है, आप ही पूछकर देखिये। यह उनसे कहिये कि आप उनका भेद किसी को नहीं बतायेंगी।" वजीर ने कहा।

"वैसा ही करूँगी।" सुल्तान की लड़की ने कहा।



उसने उस दिन मारूफ से पूछा- "आप कम से कम मुझ से तो सच कहते? मेरे पिताजी को मालूम हो गया है कि न आपका कोई काफिला है न कुछ और ही। वे आपको कड़ी सजा देंगे। वाकई, आपकी बात क्या है, आप बता दीजिये। जरूरत हुयी तो मैं सहायता करूँगी।"

मारूफ ने कुछ न छुपाया। उसने अपनी सारी कहानी सुल्तान की लड़की को सुना दी। सब सुनकर वह खूब हँसी। "इस प्रकार का दिन दहाड़े धोखा मैंने कभी नहीं सुना है। अगर आप यहाँ रहे तो हमारी जान नहीं बचेगी। वज़ीर और मेरे पिता मिलकर आपको कल करवा देंगे। मेरे पास पचास हजार दीनारें हैं। उन्हें लेकर अभी किसी दूर देश चले जाइये। जाने के बाद, किसी आदमी के द्वारा अपने कुशल समाचार भेजिये।" उसने कहा।

मारूफ ने वह पैसा ले लिया। गुलामों के कपड़े पहने सुल्तान के अस्तबल से उसने एक अच्छी नस्ल का घोड़ा लिया। और उसी रात को वह फरार हो गया।



अगले दिन सवेरे, सुल्तान ने अपने लड़की को बुलवाया। वजीर भी उनके साथ था। उसके परदे के पीछे बैठ जाने के बाद सुल्तान ने पूछा- "बेटी! तुमने अपने पति के बारे में क्या मालूम किया?"

"उनकी जबान गिरे जो झूठ बोलते हैं।" सुल्तान की लड़की ने कहा।

"क्या बात है?" सुल्तान ने पूछा।

"कल रात को किसी ने आकर मेरे पति को एक पत्र दिया। उस पत्र को लेकर मैने पढ़ा। मेरे पति के काफिले में काम करने वाले पाँच सौ गुलामों ने वह पत्र लिखकर भेजा था। दो हजार ड़ाकुओं ने घोड़ों पर सवार होकर काफिले पर हमला किया। घमासान युद्ध हुआ। कितने ही गुलाम और खच्चर मारे गये। इसीलिए काफ़िले के आने में देरी हुई।

यह जानकर भी कि सत्तर हजार दीनारों का नुक्सान हो गया है, मेरी पति ने कहा कोई बात नहीं। वे तुरन्त घोड़े पर सवार होकर चले गये। उन्होने कहा कि वे अपने साथ काफिले को लायेंगे।" सुल्तान की लड़की ने कहा।





यह सुन सुल्तान को बड़ी खुशी हुयी। उसने बजीर की ओर मुड़कर कहा-"आयन्दा कभी मुझे इस प्रकार झूठ न बताना, समझे? नहीं जानते हो, तो जवान को काबू में रखो।"

इस बीच मारूफ, घोड़े पर सवार हो रेगिस्तान की ओर निकल पड़ा। परन्तु उसका दिल सुल्तान की लड़की पर ही था। दुपहर होते होते वह एक गाँव में पहुँचा। उसे बड़ी सख्त भूख लग रही थी। पास में, एक किसान अपना खेत जोत रहा था। उसनेमारूफ को देखकर कहा-"'हुजूर का भला हो।" उसने सोचा कि वह कोई बहुत बड़ा राजकर्मचारी होगा।

मारूफ ने घोड़े से उतर कर पूछा-"कौन हो भाई तुम? उस गाँव में जो यहाँ दिखाई दे रहा है, खाना मिलेगा?"

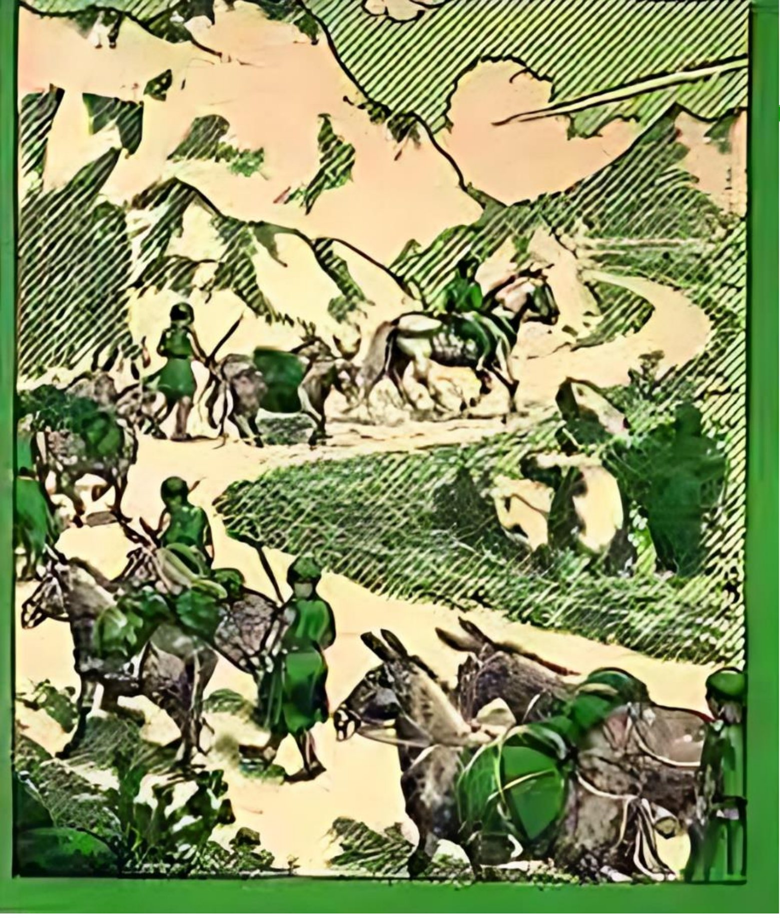
"यह जमीन मेरी ही है। हमारा गाँव बहुत छोटा है। यहाँ कोई होटल वगैरह नहीं हैं। आप क्यों फालतू तकलीफ करते हैं। आप यहीं रहिये। मैं घर जाकर आपके लिए भोजन बनवाकर ले आता हूँ। फिर आप अपनी राह जा सकते हैं।" किसान ने कहा।

बहुत देखा पर किसान वापिस न आया। क्यों कि उसके कारण ही विचारे किसान का काम खराब हुआ था इसलिये मारूफ स्वयं हल लेकर खेत जोतने लगा।

बैल थोड़ी दूर गये थे कि हल अटका। बैलों ने बहुत जोर लगाकर खींचा पर हल आगे नहीं गया।

हल क्यों रुका था, मारूफ ने जानना चाहा। उसने जमीन खोदी तो उसे एक पत्थर दिखाई दिया। उसे देखकर मारूफ को आश्चर्य हुआ, उसने अपना सारा बल लगाकर उसको एक तरफ हटाया। पत्थर





के नीचे उसे कुछ सीढ़ियाँ दिखाई दीं। मारूफ सीढ़ियाँ उतर कर गया। नीचे एक कोठी-सी थी। उसमें चार कमरे थे। उनमें सोने के ढेर, मोतियों के ढेर और रत्नों के ढेर थे। हजारों वर्ष पहले किन्ही राजाओं ने अपना धन उस कोठी में रखा था। फिर वह राज वंश खतम हो गया। उस जगह रेगिस्तान बढ़ आया। मारूफ को अपने भाग्य पर ही विश्वास न हुआ। वह फिर ऊपर आ गया। पत्थर को उसकी जगह रख दिया। उस पर मिट्टी डाल दी और किसान की प्रतीक्षा करने लगा।

थोड़ी देर बाद किसान ने तरह तरह के पकवान मारूफ के सामने रखकर कहा-"खास आपके लिए रसोई करनी पड़ी इसलिए देरी हो गई। माफ़ कीजिये।"

"तुम बहुत भोले भाले अक्लमन्द मालूम होते हो। मेरे पास पचास हजार दीनारें हैं। वे तुम ले लो और जमीन मुझे दे दो। यह पैसा लगाकर व्यापार करो। खेती करने से तुझे क्या मिलेगा?"

किसान की खुशी का ठिकाना न था। जितना रुपया सुल्तान की लड़की ने उसे दिया था उसने किसान को दे दिया, और जमीन अपने नाम लिखवा ली। वह कुछ दिन किसान के घर में ही रहा। और जहाँ कहीं कोई खच्चर मिलता तो वह खरीद लेता। छोटे मोटे काफिले अगर उस तरफ आते तो उनको उनके गुलामों सहित खरीद लेता। एक महीने में उसने पाँच सौ खच्चर और पाँच सौ गुलाम खरीद लिए। जमीन में जो कुछ उसे मिला था उसे लेकर वह फिर खातान नगर गया। इस बीच, नगर में सुल्तान बहुत घबरा गया। खजाना खाली हुए एक महीना हो गया था। सुल्तान की लड़की ने

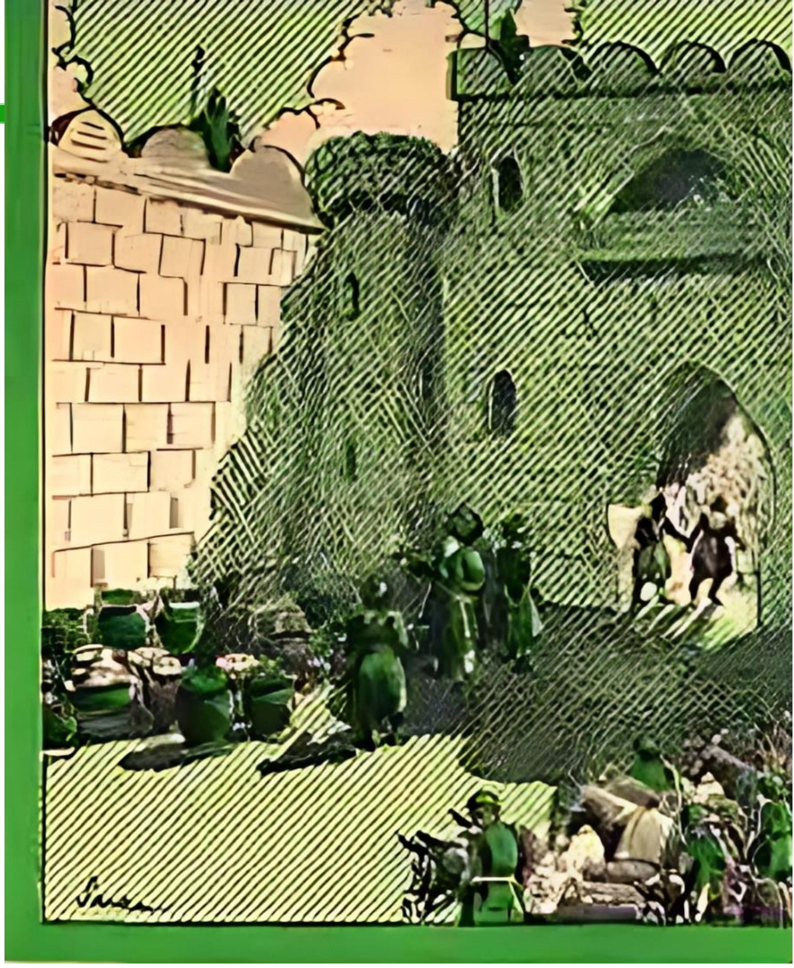
बताया कि उसका पति काफिला लेने गया था। वह वापिस आयेगा और रुपया लायेगा, यही आस बाँधे सुल्तान दिन गिन रहा था।

अन्त में वजीर ने कहा-"हुजूर ! आप अपनी लड़की की झूठी बातों में आ गये और फालतू बहक गये। आपके दामाद काफिला लाने के लिए नहीं गये हैं, अपने प्राण बचाने गये हैं। उनका काफिला कहाँ है?"

ठीक उसी समय एक सैनिक आया, और उसने सुल्तान को सलाम करके कहा-"हुजूर! दामाद साहब वापिस आ रहे हैं।"

सुल्तान का मुँह खिल-सा उठा। और वज़ीर का मुँह मुरझा-सा गया। मारूफ ने आते ही सुल्तान को गले लगाकर कहा-"मेरे अनुमान से कहीं अधिक नुक्सान हुआ। मैं थोड़ा ही ला पाया। आइये देखिये।" वह सुल्तान को अपने धन के पास ले गया।

राज महल के सामने सब गट्ठर उतारे गये थे। और खच्चर उनके एक तरफ खड़े थे। जो हजारों आदमी, वह धनराशि देखने आये थे



दूर खड़े थे। सैनिक उनको घेरे हुए थे।

मारूफ की लाई हुयी दौलत को देखकर... सुल्तान की आखें चौंधियाँ गईं। किसी गट्ठर में मोती ही मोती थे, किसी में हीरे ही हीरे, किसी में लाल तो किसी में पन्ने। किसी गट्ठर में सुपारी जितने बड़े बड़े मोती थे।

"क्या यह सब तुम्हारा माल है?" सुल्तान ने आश्चर्य से पूछा।

"इतना और तो डाकू ले गये। जो बचा उसे मैं ले आया।" मारूफ ने कहा।

सुल्तान ने अपने वज़ीर की ओर मुड़कर पूछा-"अब क्या कहते हो?"

"हुजूर। यह सब देखकर आप धोखे मैं न आइये। इसमें जरूर कुछ धोखे की बात है।" वज़ीर ने कहा।

"इस नीच को ले जाकर फाँसी चढ़ाओ।" सुल्तान ने अपने सिपाहियों से कहा। तुरन्त वे वज़ीर को पकड़ करके ले गये।

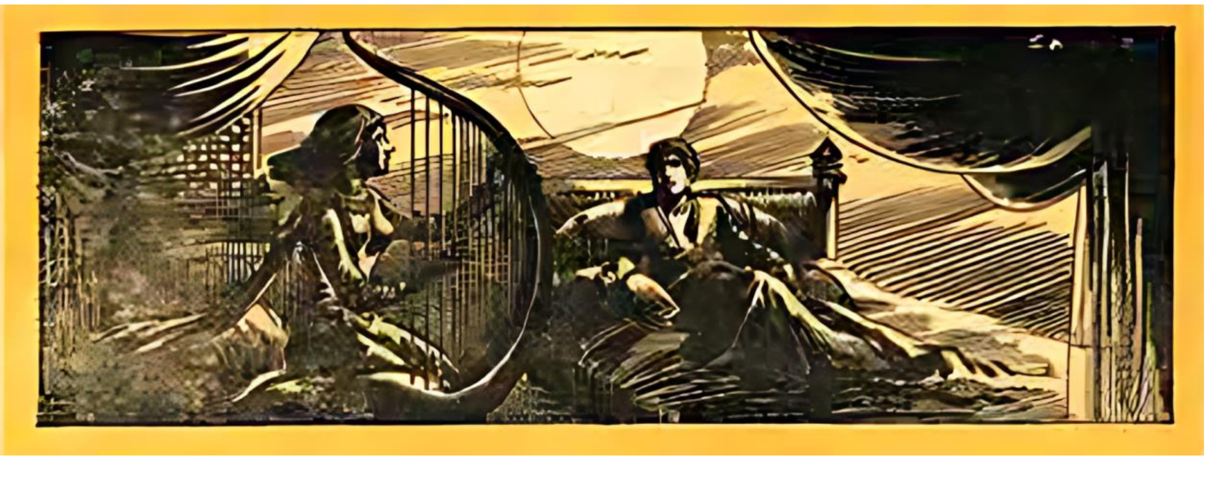
सुल्तान ने मारूफ को अपना वज़ीर बनाया और अपना वारिस भी निश्चित किया।

क्योंकि मारूफ का काफिला वापिस आ गया था, इसलिए बहुत बड़ी दावत दी गई। उस दावत में नगर के सब व्यापारी हाजिर हुये। उनमें अलि भी था। मारूफ ने सबके कर्ज का दुगना तिगुना उन्हें दे दिया। "हम जानते थे कि आपका पैसा कहीं नहीं जायेगा। परन्तु क्योंकि हम छोटे मोटे व्यापारी हैं इसलिए हम बहुत देर सब्र न कर सके।" व्यापारियों ने कहा।

अलि को काटो तो खून नहीं। अलि नहीं जानता था कि मारूफ इतना धन कहाँ से लाया था। इसी तरह सुल्तान की लड़की के आश्चर्य का ठिकाना न था ।

"यह सब कहाँ से आया? क्या आपने मेरे प्रेम की परीक्षा लेने के लिए झूट बोला था?" उसने अपने पति से पूछा। मारूफ ने उसे सच बता दिया। उसके बाद वे बहुत दिन सुख से रहे। उनके कई बाल बच्चे हुए। ससुर के मर जाने के बाद मारूफ खातान शहर का सुल्तान बना। उसने बहुत दिन वैभव के साथ राज्य किया।

(समाप्त)





अच्छा और बुरा दरवाज़ा

एक गाँव में सङ्गम लाल और रतन लाल नाम के दो नवयुवक रहा करते थे। वे दोनों छुटपन से पक्के दोस्त थे। थोड़े दिनों बाद, रतन लाल को रोज़ी के लिए गाँव छोड़कर दूर जाना पड़ा। सङ्गम लाल ने जो कुछ ज़मीन थी, उसमें अच्छी खेतीबाड़ी की, पैसा कमाया, गाय, भैंस बढ़ाये, शादी कर ली, अच्छा मकान भी बनवा लिया। वह मजे में था।

गाँव छोड़ने के सात साल बाद रतन लाल उस तरफ आया। उसने बचपन के साथी सङ्गम लाल को देखकर उसका हालचाल जानना चाहा। जहाँ पहले छोटा घर था, अब बड़ा घर था। उसके सामने का इमली का पेड़ बहुत बढ़ गया था। यहाँ एक चबूतरा भी बना दिया गया था।

"कोई फिक्र नहीं। सङ्गम लाल मज़े में है।" यह सोचता रतन लाल, सङ्गम लाल के मकान के पास जा ही रहा था, कि बराण्डे में से एक कुत्ता भोंकता भोंकता, तेजी से उसकी तरफ आया। कुत्ते का भोंकना सुन, सङ्गम लाल की पत्नी ने दरवाज़ा खोलकर देखा। कुत्ते को दूर भेज दिया। आँखें टेढ़ी-मेढ़ी करते उसने रतन लाल की ओर देखा।

"क्या सङ्गम लाल का घर यही है?" रतन लाल ने पूछा। उसने सिर हिलाकर बताया कि वह उसका ही घर था।

"घर में है या कहीं गया हुआ है?" रतन लाल ने पूछा।

"मैं क्या जानूँ, मुझे बताकर नहीं गये हैं।" सङ्गम लाल की पत्नी ने कहा।



एक समय मैं और सङ्गम लाल पक्के दोस्त थे। सात साल पहले यह गाँव छोड़कर गया था। बचपन के यार को देखने आया हूँ और ऐन वक्त पर अब वह घर में नहीं है।" रतन लाल ने कहा। सङ्गम लाल की पत्नी ने यह सुनकर कुछ न कहा। रतन लाल को घर के अन्दर आने के लिए भी न कहा।

खूब धूप हो रही थी। रतन लाल इमली के पेड़ के नीचे के चबूतरे पर लेट गया। दुपट्टे से पसीना पोंछते हुए उसने पूछा-"मुझे मालूम नहीं है.... जानना चाहता हूँ, तुम सङ्गम लाल की क्या होती हो? क्या पत्नी हो?"

उसने सिर हिलाकर बताया कि वह पत्नी थी।

"बहुत अच्छा। लगता है शादी नई हुई है। शायद बाल-बच्चे नहीं है। क्या धूप पड़ रही है.... जरा पीने के लिए पानी दोगी?" रतन लाल ने कहा।

उसने घर से, एक लोटे में पानी लाकर दिया। क्योंकि पानी घड़े का न था, इसलिए ठण्डा न था। मुख में डालने पर उसमें थोड़ी बू भी आयी। रतन लाल ने पानी फेंककर लोटा देते हुए कहा-" अब मुझे जाना होगा। अफसोस, सङ्गम लाल से न मिल सका। अगर वह आये तो कहना कि मैं आया था। मेरा नाम रतन लाल है। कहना कि यह जानकर मुझे बड़ी खुशी हुई कि वह अब एक बड़ा आदमी हो गया है। यह मकान भी बहुत सुन्दर है। परन्तु मुझे यह दरवाज़ा बिल्कुल पसन्द नहीं है। बुरा न मानना कि मैंने साफ़ साफ़ बात कह दी है। यह बिल्कुल अच्छा नहीं है। मैं बढ़ई हूँ और दरवाज़ों की बात अच्छी तरह जानता हूँ।

नहीं मालूम कि सङ्गम लाल ने यह देखा है कि नहीं। पर उससे कहना कि मुझे यह कतई पसन्द नहीं है।" रतन लाल उठकर अपने रास्ते पर चला गया।

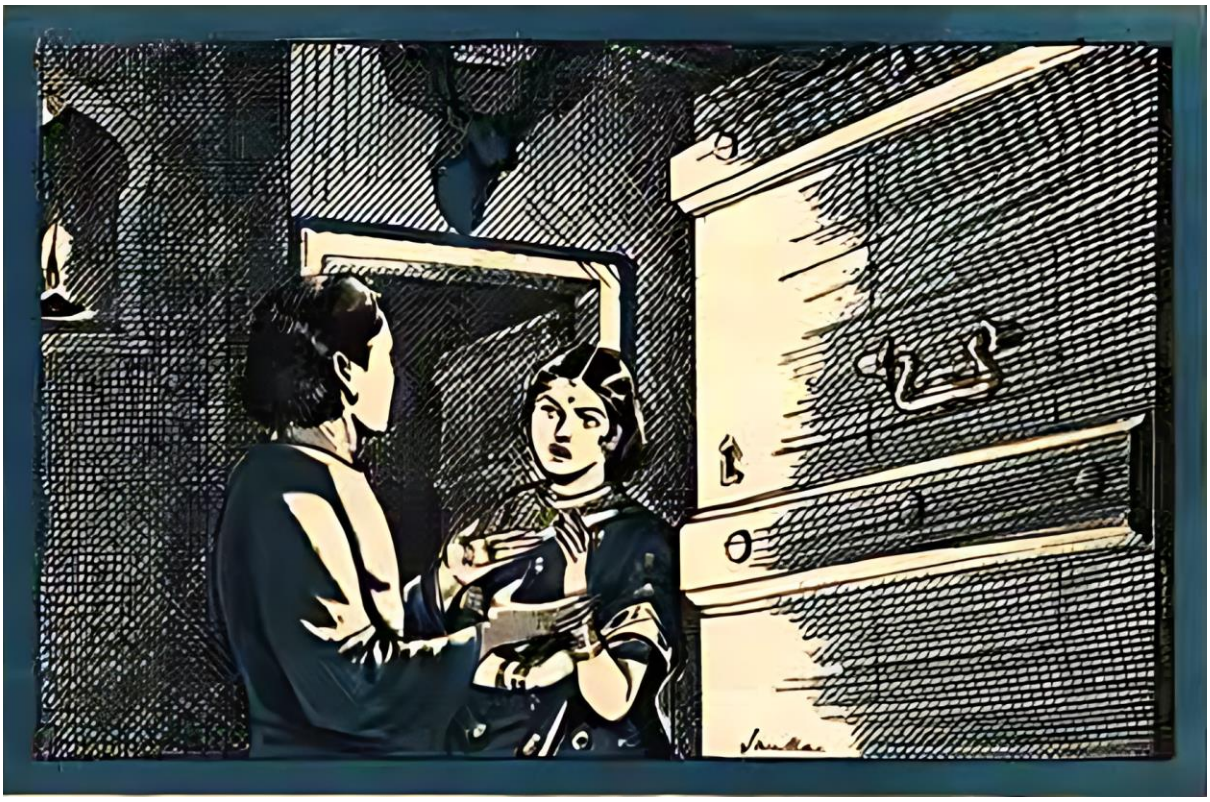
उस दिन रात को अन्धेरा होने तक सङ्गम लाल घर न आया। जब वह न था तब रतन लाल चला गया था, यह जानकर उसे बड़ा रञ्ज हुआ-"उसे क्यों तुमने जाने दिया? उसने क्या कहा था?"

"उसने कहा कि उसे इस बात की बहुत खुशी थी कि हम खुशहाल हैं। घर भी उसने अच्छा बताया, पर उसे हमारा बाहर का दरवाजा पसन्द न आया। वह बढ़ई है।" उसकी पत्नी ने कहा।

सङ्गम लाल को आश्चर्य हुआ। उसने बाहर के दरवाजे को गौर से देखा। पर उसमें कोई कमी न दिखाई दी।

एक साल हो गया। फिर गर्मियाँ आई। रतन लाल का उस इलाके में फिर एक बार आना हुआ। इस बार भी उसने सङ्गम लाल को देखना चाहा। उसके घर जाकर उसने बाहर से पुकारा-"सङ्गम लाल....!"

सङ्गम लाल की पत्नी ने दरवाज़ा खोला। रतन लाल को देखकर कहा-"आइये!"



"क्या सङ्गम लाल है?" रतन लाल ने पूछा।

"नहीं हैं, बाहर गये हैं। जल्दी ही वापिस आ जायेंगे। आप अन्दर आइये।" उसने कहा।

कड़ी धूप पड़ रही थी। फिर भी रतन लाल ने एक ओर सिर मोड़कर कहा-"जाने दो, इस पेड़ के नीचे ही काफी आराम है।" कहता कहता वह चबूतरे की ओर गया।

आप तो चबूतरे पर ऐसे बैठने जा रहे हैं जैसे हमारा घरबार ही न हो। अन्दर आइये।" सङ्गम लाल की पत्नी ने कहा।

"अच्छा, तुम्हारी मर्जी।" कहता रतन लाल उसके साथ अन्दर गया।

घर के अन्दर ठण्डक थी। आराम था।

"मैंने सोचा था कि इस बार कम से कम सङ्गम लाल दिखाई देगा। ऐसा लगता है कि मेरे भाग्य में उसे देखना लिखा ही नहीं है।" रतन लाल ने कहा।

सङ्गम लाल की पत्नी अन्दर जाकर, बड़े थाल में तीन गिलास रखकर लाई और उन्हें उसके सामने रखा। उनमें से एक में मट्ठा था। दूसरे



में नारियल का पानी और तीसरे में घड़े का पानी।

"इन्हें लीजिये, भोजन के समय वे आएँगे। तब तक आराम कीजिए। धूप में आए हैं।" सङ्गम लाल की पत्नी ने कहा।

"अरे, सङ्गम लाल की पत्नी इतनी बदल गई है!" रतन लाल को मन ही मन अचरज हुआ।

थोड़ी देर बाद सङ्गम लाल की पत्नी ने आकर कहा-"समय हो गया है, आप भोजन के लिए उठिये।"

"अभी क्या जल्दी है! सङ्गम लाल को आने दो।" रतन लाल ने कहा।

"उन्हें तो अपनी ही भूख नहीं मालूम। जाने कब घर पहुँचेंगे! आप भला क्यों उनके लिए बिना खाये पिये रहें? भोजन के लिए उठिए, जब खाना गरम है, तभी खाइए।" सङ्गम लाल की पत्नी ने कहा।

रतन लाल को सचमुच बहुत भूख लग रही थी। भोजन बहुत अच्छा था। खाने के बाद रतन लाल सो गया। सूर्यास्त के बाद उठा।

तब भी सङ्गम लाल घर वापिस न आया।

"अब मुझे जाना होगा। सङ्गम लाल को देख ही न सका।" रतन लाल ने कहा।



"जाइये मत! अगर आप इस बार भी उन्हें बिना देखे चले गये, तो वे बड़े झुञ्झलाएँगे। आज रहिये, कल जा सकते हैं।" सङ्गम लाल की पत्नी ने कहा।

"नहीं, जाना ही होगा। मेरे साथ और भी सफर करनेवाले हैं। वे इन्तजार कर रहे होंगे। मैं रहना तो चाहता हूँ, पर वह सम्भव नहीं है। तुम्हारा घर बाग़ वगैरह देखकर मुझे बहुत खुशी हुई। मैं दरवाजे के बारे में बहुत कुछ जानता हूँ। में बढ़ई हूँ। यह बहुत अच्छा दरवाज़ा है। बहुत अच्छा।" रतन लाल उससे विदा लेकर चला गया।

सङ्गम लाल जब वापिस आया तो उसकी पत्नी ने रतन लाल के बारे में कहा। उसने जो कुछ कहा था, वह इस सब भी बताया। सब सुनकर सङ्गम लाल ने कहा-"रतन लाल बड़ा लायक है। अच्छा मित्र है। बहुत अक्लमन्द भी है।"

"जब वह पिछली बार आया था, तो उसने कहा था हमारे घर का दरवाजा बिल्कुल अच्छा न था और इस साल उसने उसी की प्रशंसा की है।" पत्नी ने कहा।

"जब उसने पिछले साल कहा था कि हमारा दरवाज़ा अच्छा नहीं है, मुझे कुछ समझ में न आया। पर जब उसने इस साल हमारे दरवाजे की प्रशंसा की तो मैं सब समझ गया। जानते हो उसने बैसा क्यों कहा था? जब पिछली बार वह आया था, तुमने उसका अच्छी तरह आतिथ्य नहीं किया था। इसलिए उसे हमारे घर ड्योढ़ी पसन्द न आई। लगता है, इस बार तुमने उसकी अच्छी तरह आवभगत की है, इसलिए उसे यह सब पसन्द है!" सङ्गम लाल ने कहा।





एक बार लोमड़ी को शाक-सब्जी बोने की सुझी। उसने अपने घर का पिछवाड़ा ठीक किया और वहाँ शाक-सब्जी के बीज बोये। जब वे बड़े होने लगे तो वे गायब भी होने लगे।

उसे लगा कि कोई उसके बाग में चोरी कर रहा था। उसने चोर को पकड़ने की बहुत कोशिश की। पर चोर का कुछ पता न लगा। लोमड़ी के बाग में चोरी करनेवाला और कोई न था सिवाय खरगोश के। क्योंकि खरगोश बहुत होशियारी से चोरी कर रहा था; इसलिए लोमड़ी को चोर का पता न लग सका।

लोमड़ी ने आखिर चोर का रास्ता जान लिया। बाग के चारों तरफ की काँटों की मेंढ़ में एक जगह छेद था। चोर उसी छेद में से आता होगा।

यह पता लगते ही लोमड़ी ने चोर पकड़ने की एक चाल सोची। मेंढ़ पर बढे हुए बाँस से एक रस्सी बाँधकर एक फन्दा तैयार किया। फिर उसने बाँस को इस तरह झुकाया ताकि वह फन्दे के ऊपर आ जाय। काँटों में से किसी का अन्दर घुसते ही, बाँस के ऊपर उठ जाने का प्रबन्ध कर लोमड़ी घर में चली गई।

उस दिन खरगोश ने काँटों में से आगे पैर रखा ही था कि फन्दा, खरगोश की पीठ पर फँस गया। बाँस ऊपर उठ गया। और खरगोश हवा में लटकने लगा।

खरगोश को कुछ न सूझा कि क्या करे। वह मदद के लिए चारों तरफ़ देख रहा था कि एक भालू शहद के छते खोजता उस तरफ जाता दिखाई दिया।

श्री सुमन कुमार जोशी

"भालू भाई।" स्वरगोश ने पुकारा। भालू ने सिर उठाकर देखा। आश्चर्य से उसने पूछा-"यह क्या? वहाँ क्या कर रहे हो?"

"लोमड़ी के आँगन का पहरा दे रहा हूँ। रात भर पहरा देता हूँ, और लोमड़ी केवल एक रुपया देती है। पर बात यह है कि मुझे देखकर चोर डर नहीं रहे हैं। मैं तुम जैसा तो गम्भीर हूँ नहीं। तुम क्या यह काम करोगे? बाल बच्चे वाले हो।" खरगोश ने पूछा।

भालू को लालच आया। उसने बाँस को नीचे किया। फँन्दे में से खरगोश को निकाला और खुद फन्दे में बँध गया।

खरगोश तुरत भागा भागा लोमड़ी के पास गया। उसने उसे उठाकर कहा-"चोर फन्दे में फँस गया है, आ देख।"

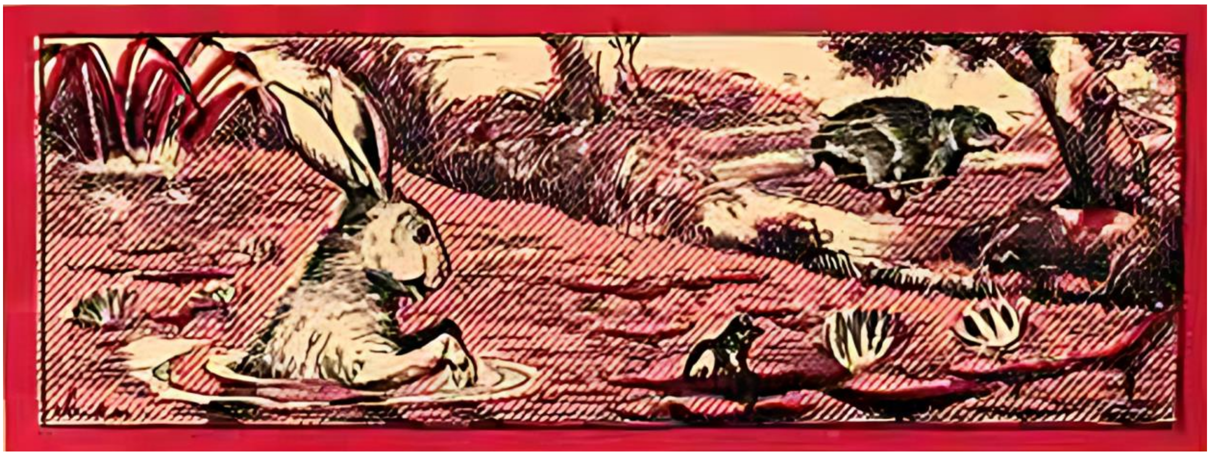
लोमड़ी छड़ी लेकर आई। भालू से पूछा-"तुझे यह क्या बीमारी हुयी है?"

भालू ने कुछ कहना चाहा। "उसके मुख पर मार।" खरगोश ने कहा।

लोमड़ी भालू के मुख पर मारने लगी। इस बीच खरगोश भाग गया। और एक दलदलवाले गढ़े में नाक तक डूबकर बैठ गया।

थोड़ी देर बाद भालू ने लोमड़ी से सारी बात कह दी। फन्दे से बाहर आकर भालू ने खरगोश की खोज शुरू की। गढ़े के पास आकर उसने खरगोश का सिर देखकर समझा कि वह कोई मेण्ढक था। उसने उससे पूछा-"क्यों मेण्ढक, क्या खरगोश इस तरफ आया था?"

"अभी इधर गया है।" खरगोश ने कहा। भालू को गलत रास्ते पर भेजकर स्वरगोश निश्चिन्त हो, अपने घर चला गया।





असफल तपस्या

विक्रमार्क तो हार मानने वाला न था। वह फिर पेड़ के पास गया। शव को उतार कर, कन्धे पर डाल शमशान की ओर चला। तब शव में स्थित बेताल ने कहा। "राजा, तेरा परिश्रम प्रशंसनीय है। पर कहीं ऐसा न हो कि माण्डव्य की तरह तुम भी अन्त में अपना परिश्रम निष्फल कर बैठो। तुम्हे जाते जाते थकान न मालूम हो; इसलिये उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यह कहानी सुनानी शुरू की।

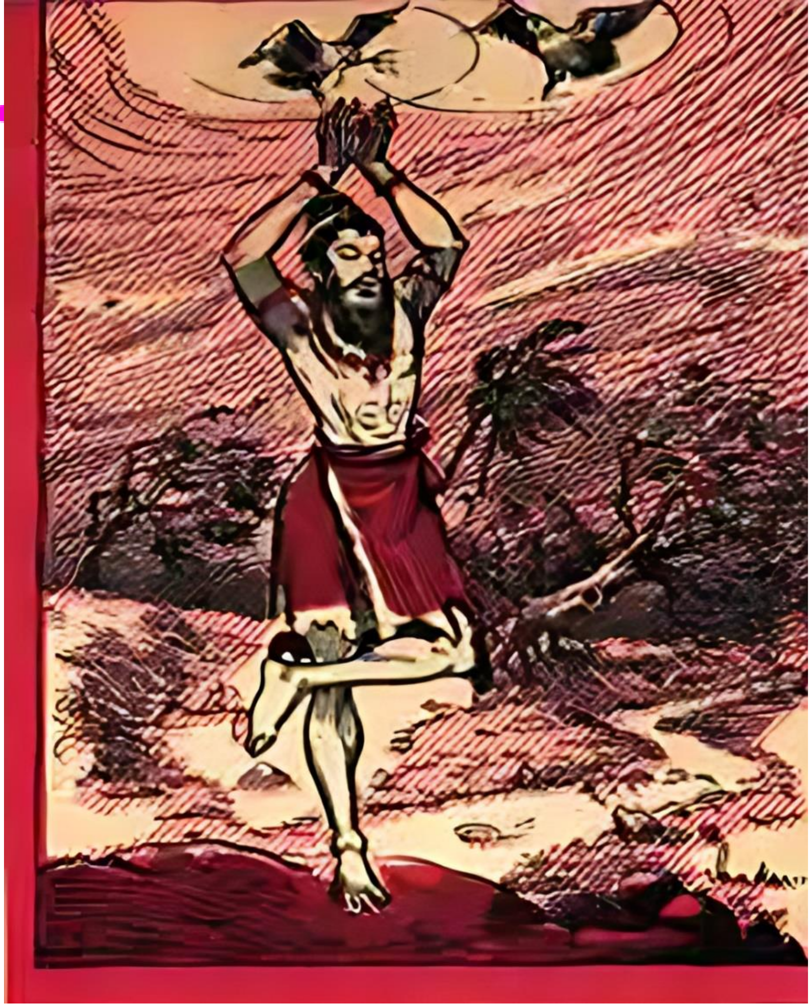
नैमिष वन में माण्डव्य नाम के महामुनि रहा करते थे। उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि संसार में सिवाय मूर्खता, धोखा, पाप के कुछ न था।

आज के नादान बच्चे कल बड़े होंगे और दुनियाँ भर के पाप करने लगेंगे।

जितना वे संसार को देखते, उतना ही उनको उससे घृणा होती। संसार के स्रष्टा पर भी उन्हें गुस्सा आया। इसलिए संसार का नाश करने के लिए उन्होंने शिव की तपस्या करनी प्रारम्भ कर दी।

नैमिष वन के एक निर्जन प्रान्त में एक पैर पर खड़े होकर हाथों को ऊपर उठाकर पद्माकार में रखकर, निश्चल हो, वे घोर तपस्या करने लगे। इस तरह समाधिस्थ होकर उन्होंने कहा-"परमेश्वर! जब तक आप इस सृष्टि का नाश न कर देंगे तब तक में इसी प्रकार तपस्या करता रहूँगा।"

कुछ समय बीता। माण्डव्य की तपस्या के प्रभाव से पञ्चभूतों में गड़बड़ी मची। भूमि काँपी। समुद्र में तूफान उठने लगे। ज्वालामुखी फूट पड़े। दण्डकारण्य में तो प्रलय सी आ गई। पेड़ पौधे जड़ से उखड़ गये। इतना सब होने पर भी माण्डव्य विचलित न हुये। उनको यह जानकर सन्तोष भी हुआ कि उनकी तपस्या के कारण संसार का नाश हो रहा था। इस कारण उनमें और भी शक्ति आ गई। अधिक उत्साह आ गया।



इसी समय दो धुग्घियों ने पेड़ की झुरमुट में घोंसला बनाना शुरू किया। मादा घुग्धी अण्डे देने को थी। जल्दी घोंसला बनाना था। उसमें अण्डे सेने थे। परन्तु उनके घोंसला बनाने के प्रयत्न सफल न हुए। हवा के कारण कहीं घोंसला टिक न पाता था।

शायद कहीं अच्छी जगह मिले, यह देखने के लिए चारों ओर देखा। उन्हे पद्माकार में रखे, माण्डव्य के हाथ दिखाई दिये। जब कि बड़े बड़े पेड़ तूफ़ान में गिर रहे थे, उनके हाथ निश्चल थे।

दोनों धुग्घियों ने हिम्मत करके उनके हाथों पर घोंसला बना लिया। उसमें मादा धुग्घी ने चार अण्डे दिये। उनको सेका। वे फूट गये। बच्चे निकल आये। नर धुग्घी और मादा घुग्धी बारी बारी से उड़ते बच्चों के लिए खाना लाकर देते। धीमे धीमे बच्चे बड़े होने लगे।

यह सब माण्डव्य देख रहे थे। अपनी शरण में आये हुए घुग्घियों और उनके बच्चों के प्रति, उनको एक प्रकार का विचित्र प्रेम हो गया। एक दिन उन्होंने आकाश से एक बाज़ को उतरते देखा। उन्होंने अपने हाथ नीचे कर लिए और घोंसले को अपनी छाती से लगाकर पकड़ लिया।

तब से वे कभी कभी हाथ नीचे रखकर यह देखा करते कि बच्चे कैसे बड़े हो रहे थे और जब पक्षी मूर्खता करते तो वे मन ही मन हँसते।

बच्चे बड़े हुए। उनके पंख उग गये। वह समय भी आया, जब वे घोंसला छोड़कर इधर उधर उछलने फुदकने लगे। नर धुग्घी घोंसले के ऊपर पंख फड़फड़ाकर उड़ता। मानों अपने बच्चों से यह कह रहा



हो-"तुम भी मेरी तरह उड़ो।" वह उनको उड़ने के लिये प्रोत्साहित करता। बच्चो ने भी पँख फड़फड़ाये; पर वे उड़ न सके। मादा घुग्धी ने धीमे से उनको घोंसले से धकेलना शुरू किया। बच्चे और भी डर गये। दोनो, नर मादा घुग्धी घोंसले के ऊपर उड़ते रहे, पर तब भी फायदा न हुआ।

ठीक उसी समय माण्डव्य ने दखल दिया। उन्होने धुग्घियों के घोंसले को एक हाथ पर रख लिया। वे अंगुली से एक एक बच्चे को घोंसले से हटाने लगे।

एक एक बच्चा नीचे गिरता। तुरन्त वह पंख फड़फड़ाता और फिर उड़ जाता, इस तरह चारों घुग्धी के बच्चे उड़ना सीख गये । माण्डव्य का मुँह आनन्द से विकसित-सा हो उठा। "पागल प्राणी, निस्सहाय। बेजवान पक्षी।" उन्होने सोचा। उस घुग्धी परिवार को देखकर उनका हृदय प्रेम और दया से सहसा भर गया।

इस बीच, उनको यकायक अपनी तपस्या की याद आई। उन्होंने चारों ओर देखा। तूफ़ान कभी का रुक चुका था। जो वृक्ष पहले टूट गये थे, अब फिर हरे



भरे थे। माण्डव्य जान गये कि ईश्वर ने उनकी इच्छा पूरी न की थी। पर वे निराश न हुए। एक बार आकाश में देखकर वे मुस्कराये। "परमेश्वर, तुम इस संसार का क्यों नहीं नाश कर रहे हो, यह अब मुझे मालूम हो गया है। अच्छा, तो तेरी इच्छा के अनुसार ही काम हो।" कहते वे अपने आश्रम चले गये, और सदा आश्रम में रहने लगे।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा- "राजा! माण्डव्य की तपस्या का भङ्ग होने का कारण क्या था? समाधिस्थ होकर हाथ हिलाना? या धुग्घियों की परवाह करना? उन्हें क्या समझ में आया? ईश्वर इस संसार को क्यों नहीं नष्ट करता? अगर तुमने जान-बूझकर इन प्रश्नों का उत्तर न दिया, तो तुम जानते ही हो कि तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

"माण्डव्य की तपस्या धुग्घियों के कारण भग्न हुई थी। जब से उनको उस पर दया आई थी, उन्होंने तपस्या न की थी। जब मनुष्य माण्डव्य को ही बेठिकाने के पक्षियों पर इतनी दया, इतना प्रेम हुआ, परमेश्वर को प्राणी मात्र पर कितनी दया आ ही होगी, कितना प्रेम होता होगा। शायद ईश्वर भी उसी की तरह सब चीज़ों से घृणा करने लगा होगा। इसलिए उन्होंने संसार के विनाश के लिए तपस्या शुरू की। पर जब उनको यह मालूम हो गया कि परमेश्वर में प्राणि मात्र की मूर्खता, पापों को सहने की शक्ति है, तो उनका उद्देश्य बदल गया।" विक्रमार्क ने यह जवाब दिया।

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते. ही बेताल, शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)





[५]

[अनेक कष्टों के सहने के बाद, अनेक सैनिक व अनेक नौकाओं के खो बैठने के बाद ऐसे द्वीप में रूपधर पहुँचा, जहाँ मुकेशिनी रहा करती थी। उसने अपने सैनिकों को दो टोलियों में बाँट दिया। मायावी को एक टोली का सरदार बनाकर उस द्वीप को देख आने के लिए कहा। वे सुकेशिनी के घर गये। उसने उनका आतिथ्य किया, और अपने जादू के प्रभाव से उन्हें सूअर बना दिया। परन्तु रूपधर पर उसके जादू का असर नहीं हुआ। वह उसकी मित्र बन गयी।]

उसकी सलाह के अनुसार, रूपधर अपने सिपाहियों के साथ समुद्र के किनारे गया। वे नौका के पास दुखी बैठे थे। अपने सरदार को देखकर उनकी जान में जान आई। जैसे माँ को देखकर बछड़े दौड़ते हैं, उसी तरह दौड़कर वे उसके पास गये। अगर इथाका भी पहुँच जाते तो उससे अधिक खुश शायद वे न होते। वे खुशी में आँसू बहाने लगे।

"कहाँ है? हमारे लोग कहाँ है?" उन्होंने रूपधर से पूछा।

"वे सब सुकेशिनी के घर में सुरक्षित हैं। आराम से खा पी रहे हैं। पहले आओ, हम अपनी नौका को किनारे पर



खींचे। रस्सी आदियों को हिफाज़त से किसी गुफा में रख दें। उसके बाद मैं तुम्हें भी सुकेशिनी के घर ले जाऊँगा।" रूपधर ने कहा। सिपाहियों की खुशी का ठिकाना न था।

तुरन्त उन लोगों ने काम करना शुरू कर दिया। मगर मायावी ने उनसे कहा-"मूर्खो! तुम कहाँ जाने की सोच रहे हो? सुकेशिनी के घर वह तुम्हें शेर, भेड़िया या और कोई जङ्गली जानवर बना देगी और अपने घर के पहरे पर रख देगी, जानते हो? भाल लोचन की गुफा में घुसकर हमारे लोगों का क्या हाल हुआ था, जरा उसे याद करो। वह भी इसी रूपधर की करतूत थी। इसी की मूर्खता के कारण वे मारे गये। और अब हमारी यह हालत हुई है।

यह सुन रूपधर को गुस्सा आया। वह तलवार लेकर मायावी का गला काटने लपका, परन्तु दूसरों ने उसे रोका-"अगर वह नहीं आना चाहता है तो यहीं बैठा नाँव की रखवाली करेगा। हम तुम्हारे साथ सुकेशिनी के घर चलेंगे। आओ चलो।" उन्होंने रूपधर से कहा। परन्तु जब सब जाने लगे तो मायावी भी उनके साथ हो लिया।

सुकेशिनी ने रूपधर के सैनिकों को अच्छी तरह नहलाया घुलाया, उनको अच्छी अच्छी पोषाकें पहनने को दीं। उनसे पहले ही, जो मायावी के साथ आये थे, खाना खा रहे थे। दोनों टोलियाँ, आपस में एक दूसरों का मुँह देखकर खुशी को काबू में न रख सकी और चिल्लाने लगीं। वे सब आश्चर्य में थे।

सुकेशिनी ने रूपधर के पास आकर कहा -"अच्छा हो अगर तुम्हारे आदमी

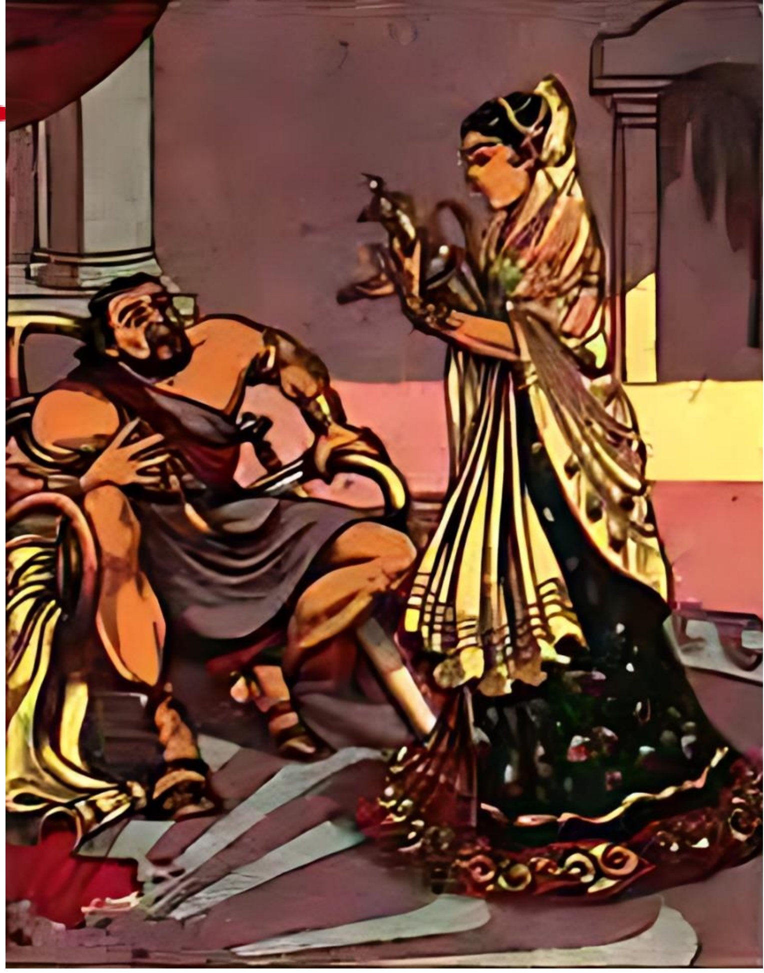
गुज़री हुई मुसीबतों को भूल जायें। मैं तुम्हारे और तुम्हारे सैनिकों के कष्टों को जानती हूँ। आराम से खाओ, शराब पिओ। जैसे तुम इवाका में सुख से रहते थे वैसे यहाँ भी रहो। यह तुम लोगों का घर ही है।

रूपधर उसकी सलाह मान गया। वहीं एक वर्ष तक अपने सैनिकों के साथ उसका अतिथि बनकर रहा। एक वर्ष समाप्त होने के बाद रूपधर के सैनिकों ने पूछा-"यह क्या? क्या हम घर वापिस नहीं जायेंगे?"

रूपधर ने मुकेशिनी से कहा-"मेरे सैनिक स्वदेश जाने के लिए उतावले हो रहे हैं। अब मेरा जाना अच्छा है। हमारी यात्रा के लिए तुम्हारी सहायता चाहिये। तुम्हारी मदद से हम अपने देश पहुँच सकते हैं।"

"मैं तुम्हें जबर्दस्ती यहाँ रखना नहीं चाहती। यम के नरक में साङ्केतिक नाम का दिव्यज्ञानी है। मरने के बाद उसका दिव्यज्ञान न गया। तुम उससे एक बार मिलकर उसकी सलाह लो।" सुकेशिनी ने कहा।

यह सुनते ही वह हताश हो गया। "बाप रे बाप! सुकेशिनी, क्या नरक जाना मेरे बस की बात है? क्या कोई



नौका में नरक गया है?" उसने पूछा।

"तुम्हारे लिए यह जरूरी नहीं है कि तुम नौका की पतवार पकड़कर बैठे रहो। मस्तूल उठा दो। पाल फैला दो। चुपचाप बैठ जाओ। उत्तर की वायु तुम्हें सीधे नरक पहुँचा देगी। तुम्हारी नौका, समुद्र पार कर नरक के किनारे पहुँचेगी। वहाँ नरक वृक्ष होंगे। तुम अपनी नौका को किनारे पर बाँध देना। पैदल यम लोक जाना। कुछ दूर जाने के बाद तुम्हें टीला-सा दिखाई देगा। उसी के पास अग्नि नदी और अश्रु नदी मिलकर वैतरणी नदी बनती है। उस पत्थर के पास दो



को न छुएँ।" सुकेशिनी ने विस्तार से रूपधर को बताया।

सवेरा हो गया। रूपधर ने अपने सैनिकों को उठाकर कहा-"उठो, आओ चलें, सुकेशिनी ने हमारे लिए एक यात्रा का निश्चय किया है।"

रूपधर के सैनिक इस खुशी में थे कि वे घर जा रहे थे। पर जब उन्हें मालूम हुआ कि वे और कहीं जा रहे थे तो वे रोये और चिल्लाये। कई अपने बाल खींचने लगे। परन्तु लाचार उन्हें जाना ही पड़ा।

जब सब मिलकर नौका के पास पहुँचे, तो सुकेशिनी वहाँ पहले से ही उपस्थित थी। नौका के पास एक काली भेड़ और एक काले भेड़ को छोड़कर बिना किसी से बात किये, वह चुपचाप वापिस चली गई।

ग्रीकों ने अपनी कश्ती को पानी में खींचा। मस्तूल उठाये। पाल फैलाये। काले भेड़ों को लेकर सब नौका में बैठ गये। सुकेशिनी की कृपा से उत्तर से वायु चलने लगी। पालों में हवा भरी। और नौका हिली। हवा के साथ तेजी से बहती गई।

तीन गज का गढ़ा खोदो। उस गढ़े में पितरों को तर्पण दो, पिण्ड दान करो और उनसे प्रार्थना करो कि तुम्हें सुरक्षित इथाका पहुँचा दें। उनके सामने प्रतिज्ञा करो कि घर जाकर उनको बलि दोगे। साङ्केतिक के सामने साष्टाङ्ग करके कहो कि उसको अलग एक काला भेड़ चढ़ाओगे। यह कहकर यम व अन्य नरक-वासियों को प्रणाम करो। इतने में पितर बलि स्वीकार करने के लिए आयेंगे। उनमें साङ्केतिक भी होगा। जब तक वह तुम्हें घर जाने का मार्ग व उपाय न बताये, तबतक तुम देखना कि तुम्हारे पितर बलि

पालों में निरन्तर हवा रही और शाम तक बिना किसी बिघ्न, बाधा के यात्रा जारी रही। फिर सूर्य छुप गया। सर्वत्र अन्धेरा छा गया। अन्धेरे में नौका किनारे पर लगी।

रूपधर ने सुकेशिनी के कथन के अनुसार जहाँ अग्नि नदी और अश्रु नदी मिलती थी, वहाँ एक गढ़ा खोदा, तर्पण किया, पिण्ड दान दिया और पितरों का ध्यान किया। उसने भेड़ों की बलि की और होम किया। उसने अपनी तरफ से सारी विधि सम्पन्न की।

तुरन्त, पितर कोलाहल करते झुण्ड बनाकर बलियों को स्वीकार करने के लिए आये। उसने यम राजा और यम के लोगों को नमस्कार करके पितरों से कहा-"जब तक मैं साङ्केतिक से कुछ प्रश्न न पूछ लूँ, तब तक कोई बलि न छुये।"

दूसरों को अलग करती एक स्त्री सामने आई। उसे देखते ही रूपधर हैरान रह गया, क्योंकि वह रूपधर की माता ही थी। रूपधर जब ट्रोय नगर की विजय के लिए निकला था तब वह जीवित थी। रूपधर यह न जानता था कि वे कब मर गई थी।



उसे देखकर रूपधर की आँखों में तरी आ गई। उसे उस पर तरस आई। फिर भी उसने उसको बलि न छूने दी। उसे दूर ही रखा। उसके पीछे ही साङ्केतिक सोने की लाठी लिये आया। उसने रूपधर को पहचान कर पूछा-"भाई, तुम्हें इस पितृ लोक में क्यों आना पड़ा, जहाँ सूर्य का प्रकाश भी नहीं आता है? थोड़ा हटो। बलि खाकर, जो तुम्हारी मदद करनी होगी, करूँगा। हटो, हमें बलि खाने दो।"

रूपधर एक तरफ हट गया और उसको, बलि को खाने दिया। फिर उसने रूपधर



की ओर मुड़कर कहा-"बेटा, तुम स्वदेश जाने के लिए रात दिन एक कर रहे हो। सचमुच, स्वदेश के अतिरिक्त स्वर्ग कहाँ है? परन्तु देवता तुम पर रूठे हुए हैं। इसलिए तुम दुनियाँ भर की मुसीबतें झेल रहे हो। लाचारी है। भले ही कितने कष्ट झेलो, तुम सुरक्षित घर पहुँच जाओगे। तेरे घर के रास्ते में तिनाप्रिय नाम का द्वीप आयेगा। वहाँ सूर्य भगवान के पशुगण होंगे। न तुम न तुम्हारे सैनिकों को ही उनके पास जाना चाहिये। अगर उन पशुओं को किसी प्रकार की हानि हुई तो तुम्हारे सैनिक कभी इथाका न पहुँच सकेंगे। केवल तू मरता जीता अकेला, एक और नौका में घर पहुँचेगा।

तब भी तेरे कष्ट ख़तम नहीं होंगे। तेरे घर में शत्रु ही शत्रु होंगे और तेरी पत्नी से शादी करने के लिए प्रयत्न कर रहे होंगे। परन्तु तुम उन्हें जैसे तैसे मार दोगे। इन सब शत्रुओं का विनाश करके, तुम्हें अपने देवताओं के प्रति अपना कर्तव्य निभाना होगा। वह कैसे करना होगा, यह भी तुम्हें बनाता हूँ। नौका में चलाये जानेवाले चप्पू को लेकर, तब तक घूमते रहना जबतक तुम्हें ऐसा व्यक्ति न मिले, जो भोजन के साथ नमक न खाता हो, समुद्र क्या चीज है यह न जानता हो। ऐसे आदमियों को पाने का मार्ग भी बताता हूँ। वे तेरे कन्धे पर का चप्पू नहीं पहचान सकेंगे और पूछेंगे कि क्या यह खेती का कोई उपकरण है? ऐसे मनुष्य दिखाई देने पर तू अपने चप्पू को जमीन में गाड़ देना, वरुण देवता को बलि देना। एक गेन्दे, एक बैल, एक सूअर को बलि देकर तू घर चले जाना। तू काफी दिन जीता रहेगा और आखिर समुद्र के किनारे ही तेरी मृत्यु होगी।

उस समय तेरे सम्बन्धी, बन्धु मित्र तेरे पास ही होंगे। यह तेरे भविष्य के जीवन की कहानी है।"

"अच्छा, तो यही होने दीजिये। क्या मैं विधि को वश में कर सकता हूँ? पर एक बात बनाइये। वहाँ मेरी माँ का प्रेत है। वह मेरी तरफ देखती नहीं, मुझसे बात नहीं करती, सिर्फ बलि की ओर ही देखती है। कोई ऐसा उपाय बताइये, जिससे वह मुझे पहचान जाये।" रूपधर ने सविनय हाथ जोड़कर उससे कहा।

"बेटा! बलि को छूने तक पितर न कुछ मालूम कर सकते हैं, न कह ही सकते हैं, यह बात याद रखो।" कहता साङ्केतिक यमलोक चला गया।

रूपधर वहीं, माँ के बलि हजम करने तक खड़ा रहा। बलि के खाते ही उसने सिर उठाया। अपने पुत्र को पहचान कर उसको पूछा-"अरे बेटा, जीते जी इस लोक में कैसे आये? यह तो सम्भव नहीं है? ट्रोय से क्या यहीं सीधे चले आ रहे हो? क्या इथाका नहीं गये? क्या अपनी पत्नी को नहीं देखा?"



"नहीं माँ! मैं घर पहुँचने के लिए नाना प्रकार के कष्ट सेल रहा हूँ। साङ्केतिक की सलाह के लिए मुझे यहाँ आना पड़ा। देख, माँ, तुम कैसे मर गई? बीमारी हुयी थी, या बस यूँ हि मर गई थी? पिताजी कैसे हैं? मेरा लड़का क्या कर रहा है? क्या वे मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं? क्या उन्हें अब भी मुझ पर भरोसा है? या वे यह सोचकर कि मैं वापस नहीं आऊँगा, किसी और के पास चले गये हैं? मेरी पत्नी क्या कह रही है? क्या करने की सोच रही है? लड़के की मदद से

सम्पत्ति की देखभाल कर रही है? नहीं तो क्या किसी आदमी को देखकर, उससे शादी कर ली है?" रूपधर ने माँ से जल्दी जल्दी पूछा।

"वह तुम्हारे घर में ही है, बेटा। जानते तो हो उसका धैर्य कैसा है। दिन रात उसका दिल दहल रहा है। तेरी सम्पत्ति वगैरह, अभी तेरे नाम ही है। तेरा लड़का विजयध्वज ही तेरी सम्पति का अधिकारी है। और वह सब काम कर रहा है, जो एक राजा को करना चाहिये। तुम्हारे पिता गाँव में ही हैं..... वे नगर न आयेंगे। सरदी में भी उनके पास न कोई बिछोना है, न दुपट्टा ही। पशुओं के पास, आग के पास, सो जाते हैं। और ऋतुओं में अंगूरों के बागों में, नहीं तो जहाँ जगह मिलती है वहाँ सो जाते हैं। बुढ़ापा तो है ही, फिर तेरी भी फिक्र है कि तू वापिस नहीं गया है। मेरी मौत के बारे में पूछते हो? मैं किसी बीमारी से नहीं मरी, न अचानक ही मरी..... बस तेरी फिक्र में ही चल बसी।" रूपघर की माँ ने साफ़ साफ़ सब कुछ कह दिया।

रूपधर ने माँ को एक बार गले लगाना चाहा, पर लगा न सका। तीन बार उसने कोशिश की, पर तीनों बार सफल न हुआ। उसने दीन स्वर में कहा-"माँ, मुझे एक बार गले लगा लेने दो। क्यों तुम.... मेरे पास नहीं आती हो?"

"बेटा, जीवित व्यक्ति मृत व्यक्तियों का कैसे आलिङ्गन कर सकते हैं? जिसे तू आलिङ्गन करना चाहता है, वह सब तो चिता में भस्म हो चुका है। इस अन्धकारमय यम लोक को छोड़कर तुरन्त चले जाओ, बेटा! परन्तु यहाँ की बातें याद करके अपनी पत्नी को जरूर बताना।" रूपघर की माँ ने कहा।

(अभी और है)





[३]

[मोरोको देश से, चीन आये हुए जादूगर ने अलादीन की माँ से परिचय कर लिया। उसने उससे कहा कि वह अलादीन का चाचा था। उसने यह भी वचन दिया कि वह अलादीन को बड़ा आदमी बना देगा। उसे बहकाकर वह नगर के बाहर ले गया और उसने उसे गुफा में भेजा। जब अलादीन ने गुफा में से लाये हुए लालटेन को न दिया तो जादूगर ने को गुस्सा आ गया। उसने अलादीन को गुफा में ही बन्द कर दिया।]

वह जादूगर सचमुच मोरोको देश का था। वह कई तरह के जादू-टोने जानता था। जब वह छोटा था उसने तभी से व्रत-उपवास करने शुरू कर दिये थे। और जब वह चालीस वर्ष का हो गया तो उसने बहुत-सी शक्तियाँ पालीं। इन शक्तियों के साथ उसमें गूढ़ रहस्यों को समझने की बुद्धि भी आ गई। इसीलिए वह यह आश्चर्यजनक बात जान सका।

कहीं दूर चीन देश में एक नगर है। उस नगर के पास, भूमि में, संसार का सबसे बडा खजाना गड़ा पड़ा है। उस खज़ाने के साथ एक जादू की लालटेन है। जो उस लालटेन को पायेगा, वह इस संसार में जो कुछ जब कभी चाहे पा सकता है। पर अलादीन नाम का एक गरीब लड़का ही उसको बाहर ला सकता था।

ये सब बातें जादूगर ने मोरोको में ही जान ली थीं। इन बातों पर पूर्ण विश्वास करके ही वह जादूगर लम्बी सफर के बाद चीन पहुँचा था। इस सफर में उसे बहुत मुसीबतें झेलनी पड़ीं। मेहनत करनी पड़ी। परन्तु उसे अलादीन मिल गया। सब काम ठीक तरह हो भी गया। परन्तु आखिर अलादीन ने लालटेन देने से इनकार कर दिया। जादूगर को गुस्सा आ गया। वह अलादीन को गुफा में बन्द करके मोरोको वापस चला गया।

जब ऊपर का छेद बन्द हो गया तो अलादीन बुरी तरह डर गया और जोर जोर से चिल्लाने लगा। "चाचा, चाचा- मुझे ऊपर निकालो।" चिल्लाता चिल्लाता वह रोया। पर वहाँ उसका रोना सुनने वाला कोई न था। अलादीन जान गया कि वह उसका चाचा न था और उसने धोखा दिया था। यह जान कर कि उस गुफा में वह जरूर मर मरा जायेगा, वह सीढ़ियाँ उतर कर बाग की ओर जाने की कोशिश करने लगा। परन्तु सीढ़ियों के अन्त में लगा दरवाजा तब बन्द हो चुका था। इसलिए वह सीढ़ियों पर गिर गया।



अलादीन, तीन दिन तक वहीं रहा। तीनों दिन उसने न कुछ खाया न पिया ही। वह रोता रहा और रह रह कर अल्लाह को याद करता। मौत से न बच सकूँगा, यह सोचकर वह हाथ मल मल कर रोने लगा। मलते मलते, उसने अपनी अंगुली की अंगूठी भी रगड़ी। वह अंगूठी उसे जादूगर ने ही दी थी।

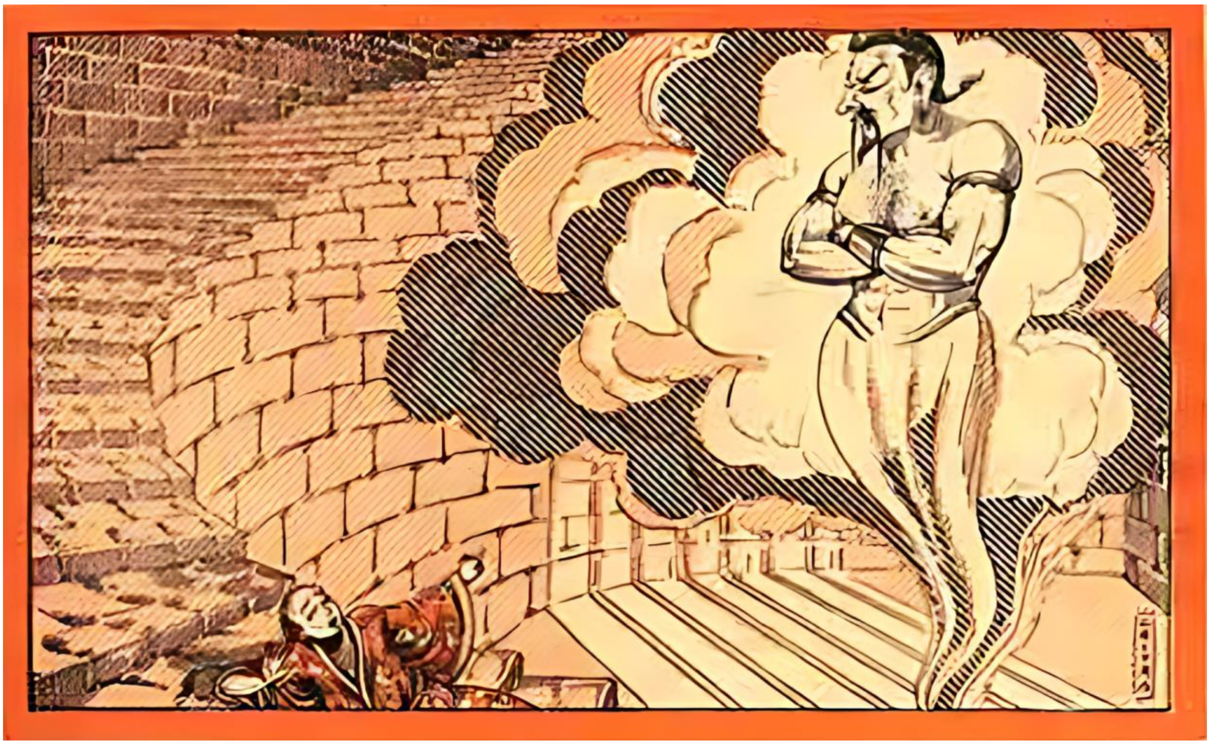
उस अंगूठी के रगड़ते ही अलादीन को काला, कद्दावर भूत सामने दिखाई दिया। "क्या आज्ञा है हुजूर?" उसने पूछा।

अलादीन का कलेजा थम सा गया। चूँकि उसने जादूगर के कारनामों को अपनी आखों देखा था, इसलिए उसने हिम्मत करके पूछा-"कौन हो तुम?"

"मैं इस अंगूठी का भूत हूँ। यह अंगूठी जिसके पास होती है उसका मैं गुलाम हो जाता हूँ। जो वे कहते हैं, मैं करता हूँ।" भूत ने कहा।

"यह बात है तो मुझे यहाँ से निकालो।" अलादीन ने कहा।

तुरन्त भूमि के फटने की आवाज हुयी, और अलादीन भूमि पर खड़ा था। क्यों





कि तीन दिन वह अन्धेरे में था, इसलिए उसकी आखें सूर्य के प्रकाश को न सह सकीं। जब उसने आखिर आखें खोलीं तो यह बात साफ हो गई कि वह भूमि पर ही था। न उसे कहीं गुफा दिखाई दी, न सङ्गमरमर का पत्थर ही। वह जगह जरूर थी, जहाँ जादूगर ने आग जलाई थी। वे बाग थे और बागों के बाद शहर दिखाई दे रहा था। अलादीन ने लम्बी साँस छोड़ी। खुदा को दुआ देता वह घर की ओर चला। वह इतनी दूर कैसे पैदल चल सका, उसे ही न पता लगा। घर में घुसते ही वह माँ के सामने बेहोश गिर गया।

उसकी माँ, इतने दिनों उसके लिए रोती पड़ी रही। उसने अलादीन के मुँह पर पानी छिड़का। उसे होश आई। उसे कुछ खाने के लिए दिया। अलादीन में कुछ ताकत आई। "माँ! जो अपने को चाचा बता रहा था, वह सचमुच चाचा न था। वह जादूगर था। उसने मुझे मारने की कोशिश की। उसकी बातों में हम आ गये थे। जानती हो, माँ उसने क्या किया?" अलादीन ने जो कुछ गुजरा था, माँ को सुनाया।

उसकी माँ ने कहा- "वह चोर था, यह मैं तभी जान गयी थी। गनीमत है कि खुदा की मेहरबानी से तू जिन्दा है।" वह कह ही रही थी कि अलादीन झपकियाँ लेने लगा, जैसे किसी नशे में हो, क्यों कि वह तीन दिन सोया तक न था। वह अगले दिन दोपहर तक खूब सोता रहा।

उसने उठते ही कहा-"माँ भूख लग रही है। कुछ खाने को दो।"

"अरे बेटा। घर में तो कुछ खाने के लिए है नहीं। जो कुछ था वह तुझे ही

परोस दिया था। मेरे पास मेरा कता कुछ सूत है। उसे बेच बाचकर, तेरे लिए कुछ खाने को ले आऊँगी।" माँ ने कहा।

"सूत बेचने से क्या मिलेगा माँ? जो मैं लालटेन लाया था, उसे ले जा। उसे बेचकर जो पैसे मिलेंगे लेता आऊँगा।" अलादीन ने कहा।

उसकी माँ ने लालटेन लाकर कहा- "बेटा, यह जरा मैली है। अगर इसको पोछकर चमका दें तो दो चार पैसे और अधिक मिल जायेंगे।"

उसने गीली रेत से लालटेन चमकानी शुरू की। उसने दो तीन बार लालटेन रगड़ी ही थी कि सामने ताड़ के बराबर एक भूत दिखाई दिया। "क्या आज्ञा है आपकी? मैं और कई और भूत इस लालटेन में रहते हैं। यह लालटेन जिसके पास होती है, हम उसकी सेवा करते हैं।"

उस भूत को देखते ही अलादीन की माँ काठ-सी हो गई। वह बेहोश होकर गिर गई।

घर में बैठे अलादीन को भूत की बातें सुनाई दीं। क्यों कि वह पहले



ही अंगूठी के भूत से बात कर चुका था, इसलिए उसने बाहर आकर देखा। माँ के हाथ से लालटेन लेकर उसने कहा-"मुझे बहुत भूख लग रही है। अच्छा भोजन लाओ।" उसने भूत को आज्ञा दी।

भूत चला गया और तुरन्त एक विशाल थाल ले आया। उस थाल पर तरह तरह के पकवान व पेय थे। भूत के चले जाने के बाद उसने माँ की सेवा-शुश्रुषा करके उसे जगाया।

उसने आखें खोलकर चाँदी के थाल में खाने की चीजें देखी तो उसने पूछा-

"बेटा, यह सब कहाँ से आया? क्या राजा ने हमारी मुसीबतों को देखकर हमारे लिए यह भोजन भेजा है?"

"यह सब बाद में मालूम कर लेना। पहले अपनी भूख तो मिटा लें।" अलादीन ने कहा।

उस गरीब स्त्री ने वैसा भोजन कभी न किया था। वह राजा महाराजाओं का भोजन था। उस चान्दी के थाल की कीमत भी माँ बेटा न जानते थे।

उनके पेट भर खाने के बाद भी, इतनी चीजें बच गई कि वे दो बार और भोजन कर सकते थे। फिर उसकी माँ ने उससे कहा-"बेटा, अब तुम न कहोगे कि मुझे भूख लगी है, यही मेरे लिए काफी है। हाँ बेटा, वह भूत क्या हुआ?"

उसके बेहोश होजाने के बाद जो कुछ गुजरा था उसने अपने बेटे से जान लिया। उसने कहा-"यानि, मनुष्यों को भूत सचमुच दिखाई देते हैं? मैने कभी कोई मूत न देखा था। शायद तुझे उस गुफा से यही भूत निकालकर लाया था।"

"नहीं! माँ, जो मुझे गुफा से बाहर लाया था, वह अंगूठी का भूत है।



यह लालटेन का भूत है। दोनों की शक्ल-सूरत में बहुत फर्क है।" अलादीन ने कहा।

"हमारे घर में इन भूतों का क्या काम है, बेटा! जाओ, इस अंगूठी और लालटेन को कहीं फेंक आओ।" अलादीन की माँ ने डरते हुए कहा।

"वे हमारा उपकार कर रहे हैं न?" अलादीन ने कहा।

"हमारा उन मूतों से वास्ता रखना ही गलत है। यही नहीं, मैं उन्हें देखकर डर के मारे मर जाऊँगी।" माँ ने कहा।

"माँ, तुम कुछ सोचो तो सही, हमें फिर भूख लगेगी, तब क्या खायेंगे? वह जादूगर मोरोको से इतनी दूर क्यों आया था जानती हो? इस लालटेन के लिए ही। उस गुफा में इतना सोना है कि कोई ठिकाना नहीं। परन्तु उसने वह न माँगा। मैंने उसे लालटेन न दी, इसलिए वह मुझे गुफा में बन्द करके चला गया। इस लालटेन में बड़ा जादू है। वह जब तक हमारे पास है हमें किसी चीज की कमी न होगी। हमें उसे अपनी जान से भी अधिक हिफाजत से रखना होगा। किसी





को यह मालूम भी न हो कि यह हमारे पास है और अब इस अंगूठी के बारे में इसने मुझे एक बार मौत से बचाया है। कल मुझ पर कोई और आफत आ सकती है, तब यह मेरी रक्षा करेगी। इसे कैसे फेंक दूँ? यह मेरी अंगुली में ही रहेगी। अगर तुम लालटेन को देखकर डरती हो, तो मैं उसे ऐसी जगह रख दूँगा, जहाँ तुम्हें वह दिखाई न दे।" अलादीन ने कहा।

"जैसी तेरी मर्जी, बेटा! मैं भला तुझे क्यों रोकूँ? परन्तु मैं उन भूतो को अपनी आँखों नहीं देखूँगी।" माँ ने कहा।

जो भोजन भूत लाये थे, वह अगले दिन खतम हो गया। बड़ा चान्दी का थाल और उसमें रखे बारह कटोरे बाकी रह गये। अलादीन ने एक छोटे कटोरे को ले जाकर बाज़ार में एक महाजन को दिखाया। महाजन ने अलादीन से पूछा-"इसे कितने में बेचोगे?"

"इसकी कीमत कितनी है, क्या तुम नहीं जानते?" अलादीन ने पूछा।

महाजन दुविधा में पड़ गया। मालूम नहीं, अलादीन उसकी कीमत जानता था कि नहीं? अगर कम बताता है तो शायद अलादीन ड़ाँटे, ड़पटे, और अधिक बताता है तो उसे शायद नुक्सान होता, यह सोचते हुए उसने अपनी जेब में से एक सोने की मुहर निकाली। अलादीन ने हाथ फैलाया। मुहर लेकर वह अपने घर चला गया। महाजन को यह खेद रहा कि वह उसे, उससे कम भी देता तो वह ले लेता। अलादीन उसकी कीमत न जानता था।

अलादीन ने उस सोने की मुहर को अपनी माँ को दी। वह बाजार जाकर आवश्यक चीजें खरीद लाई। उस पैसे के

खर्च हो जाने के बाद एक और कटोरा ले जाकर महाजन को दिया। क्यों कि उसने पहले एक सोने की मुहर दे रखी थी, इसलिए इस बार भी उसे सोने की मुहर देनी पड़ी।

इस प्रकार उसने बारह कटोरे बेच दिये। अब केवल चान्दी का थाल रह गया। वह बहुत भारी था। इसलिए अलादीन ने महाजन को अपने घर बुलाया। उसने उसको दस सोने मुहरें देकर उस चान्दी के थाल को खरीद लिया।

वह पैसा भी समाप्त हो गया। अलादीन ने अपनी माँ को कहीं भेजकर, लालटेन को रगड़ा। भूत प्रत्यक्ष हुआ। "भूख लग रही है। पहले जैसा भोजन लाये थे, अब भी लाओ।" उसने भूत से कहा। भूत फिर एक बार बड़े चान्दी के भाल और बारह कटोरों में भोजन लाकर गायब हो गया।

थोड़ी देर बाद अलादीन की माँ वापिस आई। भोजन देखकर उसने सन्तोष से कहा-"इस भूत की मेहरबानी से फिर भोजन आ गया है। पर में इसको अपनी आखों नहीं देखूँगी।"



माँ बेटे ने दो दिन आराम से भोजन किया। फिर अलादीन एक चान्दी का कटोरा लेकर बाजार गया।

रास्ते में एक सर्राफ की दुकान थी। यह सर्राफ बड़ा ईमानदार और सच्चा था। उसने अलादीन को देखकर कहा-"मैं देख रहा हूँ कि तुम कमी कभी कुछ ले जाकर महाजन के यहाँ बेच रहे हो। बेटा, महाजन बड़े निर्दय होते हैं। मुझे क्यों नहीं बेचते?"

अलादीन ने कटोरा निकाल कर सर्राफ को दिखाया। सर्राफ ने उसे



तराजू में तोलकर कहा-"इसकी कीमत सत्तर सोने की मुहरें हैं। तुझे उस महाजन ने कितना दिया था?"

"उसने सिर्फ दस मुहरें दी थीं। बड़ा दुष्ट है।" यह कह कर अलादीन ने वह कटोरा सर्राफ को बेच दिया। वह पैसा लेकर घर चला गया।

तब से वह अपनी सारी चान्दी उस सर्राफ को ही बेचने लगा। धीमे धीमे उसके पास पैसा जमा होने लगा। परन्तु अलादीन ने शान शौकत से जिन्दगी बिताने की कोशिश न की। पैसा फाल्तू न खर्चता। वह और उसकी माँ सादगी की जिन्दगी बिता रहे थे।

अब अलादीन पूरी तरह बदल गया था। वह अब आलसी न था। वह रोज बाजार जाता। बड़े बड़े व्यापारियों से बात करता। व्यापार का उतार-चढ़ाव देखता, सर्राफ्रों के क्रय-विक्रय का अध्ययन करता।

उसे एक आश्चर्यजनक बात मालूम हुयी। जादूगर ने जब उसे गुफा में भेजा था और जो फल उसने वहाँ के बाग में तोड़े थे, वे महज काँच के टुकड़े न थे, बल्कि अमूल्य रत्न थे। जो रत्न उसके पास थे, राजा-महाराजाओं के पास भी न होंगे। जौहरियों के कीमती रत्न उसने देखे पर जो रत्न उसके पास थे उनके सामने वे कुछ न थे।

यह बात मालूम करने के कुछ दिनों बाद ही एक अजीब बात हुयी। जब यह जौहरियों के बाजार में जा रहा था तो उसने देखा कि राज सैनिक उनकी दुकानें बन्द करवा रहे थे। उस मार्ग से राजकुमारी स्नानागार जा रही थी। वे घोषणा कर रहे थे कि लोग दुकानें



बन्द करके अपने घरों में चले जायें, जो नहीं जायेंगे, उनको मृत्यु दण्ड दिया जायेगा।

इस घोषणा के सुनने के बाद, अलादीन ने जैसे तैसे राजकुमारी को देखना चाहा। उसने सुन रखा था कि राजकुमारी बहुत सुन्दर थी। सबका यही ख्याल था।

उसको देखने के लिए उसने चारों ओर घूम कर देखा कि कहीं कोई जगह है कि नहीं। परन्तु उसे कोई जगह न दिखाई दी। अगर वह स्नानागार के दरवाजे के किवाड़ों के पीछे छुप गया तो वह राजकुमारी को देख सकेगा, यह उसे सूझा। तुरन्त वह स्नानागार की ओर भागा।

स्नानागार का दरवाजा बहुत बड़ा था। उसके किवाड़ के सामने अलादीन छुप गया। वह राजकुमारी के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

इस बीच, राजकुमारी बुदूर, राजमहल से, नगर का निरीक्षण करती, सुनसान गलियों में से स्नानागार पहुँची। स्नानागार में पैर रखते ही उसने अपने मुँह का परदा ऊपर उठाया।

तब अलादीन ने राजकुमारी को देखा। उसे लगा कि उसका मुँह चन्द्रमा से भी अधिक सुन्दर था। "ओहो यह अल्लाह की महिमा है कि उसने ऐसी सुन्दरी को बनाया।" अलादीन ने सोचा।

अब तक अलादीन को सब औरतें माँ ही लगती थीं। उसने कभी न सोचा था कि उनमें सौन्दर्य भी होता है। परन्तु जब उसने बुदूर राजकुमारी को देखा तो उसका हृदय प्रेम से गदगद हो उठा।

(अभी और है)





रूपधर की यात्राएँ